नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

मासिक समाचारपत्र • वर्ष 5 अंक 10
नवम्बर 2003 • तीन रुपये • बारह पृष्ठ

मुलायम का नकली समाजवाद और फर्जी धर्मनिरपेक्षता असली रंगत में

मेहनतकशों का असली समाजवाद इंकलाब के रास्ते आयेगा!

"विकास" की बागडोर मुनाफाखोरों के हाथ • बिड़ला, अंबानी, गोदरेज, सहारा जैसे पूँजीपति मुलायम-मार्का समाजवाद लायेंगे • फिल्मी हीरो बेचेगा यू.पी. को पूँजी के जगमग बाजार में • धर्मनिरपेक्षता के नाम पर 'अयोध्या-अयोध्या' का खेल

सम्पादक

लखनऊ। उत्तर प्रदेश में मुलायम ब्राण्ड का समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता की राजनीति अपनी असली रंगत में आ गयी है। जैसे सड़े हुए गुड़ की गगरी खोलने पर बदबू का तेज भभका निकलता है ठीक वैसे ही इस ब्राण्ड के समाजवाद की बदबू प्रदेश की फिजां में फैल गयी है। इसके साथ ही भाजपा के साथ 'अयोध्या-अयोध्या' का दो दशक पुराना खेल भी मुलायम सिंह यादव जितनी बेशर्मी से खेल रहे हैं उससे उनकी धर्मनिरपेक्षता की राजनीति के मुरीद भी अब शर्माने लगे हैं।

मायावती की पार्टी में तोड़फोड़ कर तीसरी बार मुख्यमंत्री की कुर्सी हथियाने वाले मुलायम सिंह यादव ने आनन-फानन में उत्तर प्रदेश विकास परिषद का गठन कर अपने समाजवाद का ठेका देश के चोटी के मुनाफाखोरों को दे डाला है। अब कुमारमंगलम बिड़ला, अनिल अंबानी, आदी गोदरेज, एम.एस. बंगा (हिन्दुस्तान लीवर), सुब्रत राय (सहारा) और ए.वी. कामथ (आई.सी.आई.सी.आई.) जैसे चोटी के उद्योगपति इस परिषद में बैठकर प्रदेश के "विकास" की योजनाएं बनायेंगे और मुलायम सिंह यादव के सपनों के समाजवाद को प्रदेश की धरती पर साकार करेंगे। उनके परमप्रिय सखा उद्योगपति और समाजवादी पार्टी के महासचिव अमर सिंह इस परिषद के अध्यक्ष होंगे। अब भूमण्डलीकरण के इस जमाने में 'समाजवाद' गाजे-बाजे, धूम-धड़ाके और भांड़-भडुक्कों के बिना कहां आ सकता है। सो, अमिताभ बच्चन को मुलायम ब्राण्ड के समाजवादी माल का प्रचार-प्रसार करने के लिए 'ब्राण्ड अम्बेसडर' बना दिया गया है। हाल ही में दिवालियेपन से उबरे सिनेमाई "महानायक" को अपनी कम्पनी की नयी पारी शुरू करने के मौके पर 'बड़े भाई' (वैसे अमिताभ बच्चन मुलायम सिंह यादव को पिता-समान भी कह चुके हैं) ने जो तोहफा दिया है उसे भला कैसे ठुकराया जा सकता है।

बहरहाल, प्रदेश की चुनावी राजनीति का जो समीकरण फिलहाल दिख रहा है उसे देखते हुए ऐसा लगता है कि अगले तीन साल तक राम मनोहर लोहिया और चौधरी चरण सिंह के इस शागिर्द की समाजवादी परियोजना खूब फलेगी-फूलेगी। हो सकता है कुछ लोहियावादी और चरण सिंह के समर्थक मुलायम सिंह यादव की इस परियोजना पर नाक-भौं सिकोड़ें। वे इस पर भी बौद्धिक कवायद कर सकते हैं कि मुलायम सिंह की परियोजना लोहिया और चरण सिंह की परियोजनाओं का विस्तार है या उसका विकृतिकरण। प्रदेश में पहली बार इस परियोजना के अमल की वास्तविक शुरुआत होने से इन स्वर्गीय आत्माओं को शान्ति मिलेगी या वे बेचैन होंगी, इस पर पूंजीवादी राजनीतिक-बौद्धिक हलकों में बावेला खड़ा हो सकता है। इस पर गम्भीर बहस भी छिड़ सकती है कि लोहिया का समाजवाद छोटी पूंजी का समाजवाद था और चरण सिंह का किसानी समाजवाद, फिर बड़ी पूंजी के जरिये आ रहे समाजवाद को मुलायमसिंह समाजवाद कैसे कह रहे हैं। लेकिन वैचारिक दखल से मुलायम यादव के बढ़ते कदमों के रुक जाने की सम्भावना के बारे में केवल वही बात कर सकता है जो उनके बाहुबल और छल-बल के बारे में किसी मुगालते में होगा।

मुलायम ब्राण्ड के समाजवाद की तस्वीर या एक मोटा खाका भी सामने आ चुका है। परिषद की स्थापना बैठक के बाद अनिल अंबानी ने प्रेस के जरिये प्रदेश की जनता को जानकारी दी कि वह 1000 करोड़ रुपये का निवेश कर 'समाजवाद' की मजबूत बुनियाद रखेंगे। प्रदेश में रिलायंस की मोबाइल सेवा अभी तक सिर्फ 45 शहरों-कस्बों में है, वह अगले एक वर्ष में बढ़कर 300 शहरों-कस्बों तक पहुंच जायेगी। अब रिलायंस समूह प्रदेश के बिजली क्षेत्र को भी अपने हाथों में लेकर नेहरू के सरकारी समाजवाद की जगह 'बाजार-समाजवाद' ले आयेगा।

परिषद के अध्यक्ष अमर सिंह ने जो बताया उसके मुताबिक कुमार मंगल बिड़ला व गोदरेज उत्पादन और बाजार के जिस भी क्षेत्र पर कब्जा जमाकर 'समाजवाद' लाना चाहेंगे उन्हें वह क्षेत्र मिल जायेगा। हिन्दुस्तान लीवर ने सड़क निर्माण, ऊर्जा क्षेत्र और कृषि आधारित उद्योगों में दिलचस्पी दिखायी है। माननीय सहाराश्री का क्या पूछना! उनकी तो पांचों उंगलियां घी में हैं और सिर कड़ाही में! 'सैंया भये कोतवाल, अब डर काहे का!' सहारा इण्डिया ने उत्तर प्रदेश से देश के अन्य हिस्सों के लिए 15 सीधी विमान सेवाएं शुरू करने का निर्णय लिया है। इसके अलावा सहारा समूह राज्य में हाउसिंग कालोनियों के निर्माण में 20,000 करोड़ रुपये का निवेश करेगा। गौरतलब है कि वित्त

(पेज 6 पर जारी)

अमीरजादों की ऐयाशी और आम मेहनती जनता की बढ़ती तबाही-बर्बादी

उत्तरांचल राज्य गठन के तीन वर्ष

बिगुल टीम

कुमाऊं। उत्तराखंड की मेहनतकश गरीब जनता ने एक सपना देखा था। गरीबी, भुखमरी, ज़िल्लत की जिन्दगी से मुक्ति का सपना। रोजगार की तलाश में दर-दर भटकते, देशभर के होटलों-ढाबों में अपमानजनक स्थितियों में खटते पहाड़ के नौजवानों को रोजगार मिलेगा। उद्योग-धंधों के विकास से रोजगार के नये अवसर मिलेंगे। औरतों-बच्चों को पहाड़ के दुर्गम क्षेत्रों में कोसों चलकर पीने का पानी और जलावन की लकड़ियों का गट्ठर नहीं ढोना पड़ेगा। यहां की औरतों को बीहड़ श्रमसाध्य कामों की कठिनाई से मुक्ति मिलेगी। जल-जंगल-जमीन माफियाओं की कैद से मुक्त होंगे। सुदूरवर्ती पहाड़ भी बिजली की नयी रौशनी से जगमगा उठेंगे।

अपने इसी सपने को साकार करने के लिए यहां की आम जनता आंदोलन की राह पर चली। उसने लाठियां- गोलियां खाईं, अपमान झेले और अपना जुझारू संघर्ष जारी रखा, लेकिन उत्तराखंडी जनता, देश के लुटेरे सत्ताधारियों द्वारा एक बार फिर छली गयी। तीन साल पहले 9 नवम्बर को नया राज्य तो बना, लेकिन जनता के अरमानों को ध्वस्त कर दिया गया और सपने एक के बाद एक टूटते चले गये।

जनता के उत्तराखंड की जगह लुटेरों का उत्तरांचल राज्य बना। जनभावनाओं और जनता की सहूलियतों को ठेंगा दिखाते हुए नौकरशाहों, नेताओं एवं मुट्ठी भर परजीवी जमातों के ऐशो-आराम के लिए राजधानी गैरसैण की जगह देहरादून में बना दी गयी। मुजफ्फरनगर कांड के अपराधी, हत्यारे-बलात्कारी अधिकारी छुट्टा सांड बनकर घूमते रहे, देश व उत्तर प्रदेश- उत्तरांचल के सत्ताधारी इनकी पदोन्नति करते रहे। न्यायपालिका ने तो एक फैसले में इन्हें दोषमुक्त भी कर दिया था। यह उत्तराखंड की जनता का जुझारूपन ही था, जिसने नैनीताल हाईकोर्ट को अपना फैसला वापस लेने के लिए मजबूर कर दिया। इन तीन वर्षों में शराब व भूमाफियाओं का वर्चस्व और बढ़ गया। साम्राज्यवादियों के एजेंट के तौर पर काम करने वाली स्वयंसेवी संस्थाओं (एनजीओ) का नेटवर्क और मजबूत हो गया। पानी-बिजली तक पर बहुराष्ट्रीय व देशी लुटेरी कंपनियों का कब्जा बढ़ता गया। सब्सिडियां डकार कर और प्राकृतिक संसाधनों एवं मानव श्रम को निचोड़ कर यहां से तमाम कंपनियां भाग चुकी हैं और कई भागने की फिराक में हैं। दमन का सिलसिला भी बढ़ता जा रहा है।

अलग राज्य बनने के बाद तीन वर्षों के दौरान भाजपा व कांग्रेस के तीन मुख्यमंत्रियों की सरकारें बनीं और सबने जनता की छाती पर मूंग दलने का काम ही किया। लाल-नीली बत्ती वाली गाड़ियों की भरमार हो गयी। 22 की जगह 70 विधायक बन गये। जंबो-जेट मंत्रिमंडल बन गया। नौकरशाहों-अफसरों-ठेकेदारों की नयी भारी-भरकम जमात खड़ी हो गयी। स्थानीय थैलीशाहों, बड़े फार्मरों से लेकर देश के बड़े पूंजीपतियों और वैश्विक लुटेरी कंपनियों की लूट का नया चरागाह साबित हो रहा है यह नवोदित राज्य! विपुल प्राकृतिक संपदा वाले इस पर्वतीय अंचल की देशी-विदेशी मुनाफाखोरों द्वारा पहले से जारी लूट नया राज्य बनने के बाद और बेलगाम हो गयी है।

(पेज 6 पर जारी)

बजा बिगुल मेहनतकश जाग, चिंगारी से लगेगी आग!

आपस की बात

एक मजदूर की आपबीती

मैं 'बिगुल' के पाठकों से अपना दुख साझा करना चाहता हूं। मैं नोएडा सेक्टर-5 स्थित बी-69 "मारुति रबर उद्योग प्राइवेट लिमिटेड" में एक मजदूर था। इस कंपनी के मालिक पवन जैन हैं, जिनकी नोएडा और दिल्ली में कई और कंपनियां हैं। यह कंपनी प्लास्टिक के पाइप आदि का उत्पादन बड़े पैमाने पर करती है।

इस कंपनी में मैं हेल्पर था, जिसमें 12 से 14 घंटे जांगर खटाने के बाद मात्र 1500 रुपये ही मिलता है और ओवरटाइम के नाम पर कुछ भी नहीं। इस कंपनी में जब मन में आया हेल्पर की नाइट ड्यूटी लगा दी जाती है। इसका विरोध करने पर नौकरी से निकाल देने की धमकियां मिलती हैं।

कंपनी में मैं सुबह 8 बजे से रात 8-9 बजे तक 1600 रुपये में काम करता था। रोज की तरह 5 जुलाई, 2002 को सुबह 8 बजे मैं कंपनी गया, तो सुपरवाइजर ने घड़ी देखते हुए बताया कि तुम आज 10 मिनट लेट आये हो इसलिए काम पर नहीं रखे जाओगे। तुम्हें नाइट ड्यूटी में आना होगा। रात 8 बजे जब मैं ड्यूटी गया, तो सुपरवाइजर ने हेल्पर होने के बावजूद मुझे मशीन पर लगा दिया। मैंने विरोध किया कि रोलर मशीन से मुझे डर लग रहा है, क्योंकि मैंने कभी मशीन नहीं चलाई। इसलिए में मशीन नहीं चलाऊंगा। आखिरकार धमकाने-घुड़काने के बाद मैंने रोलर मशीन पर काम करना शुरू कर दिया। काम करने के कुछ ही समय बाद मेरा बायां हाथ मशीन में जा फंसा और जड़ से मेरी पांचों उंगलियां कट गयीं और मैं बेहोश हो गया। कंपनी के कर्मचारियों ने मुझे प्रयाग अस्पताल में भर्ती कराया। तीन दिन बाद कंपनी से फोटोग्राफर आया और मेरा फोटो खींच कर ले गया। मालिक ने मेरा फर्जी हस्ताक्षर करके बैकडेट में ई.एस.आई का कार्ड बनवाया, जिससे कि मुआवजा देने से छुट्टी मिल सके। इसके बाद वहां से सेक्टर-12 स्थित ई.एस.आई. अस्पताल में भर्ती कराया गया।

जब मैंने कंपनी मालिक पवन जैन से मुआवजे एवं फिर से काम पर रखने की मांग की, तो उसने डांट-डपट के लहजे में कहा कि "जब तुम्हारा हाथ ही नहीं है, तो तुम कौन सा काम कर पाओगे। जा भाग जा यहां से! मुआवजे की मांग की तो समझ लेना क्या होगा।!" बाद में मैंने एक वकील से संपर्क किया, तो कुछ पैसा लेकर केस लड़ने के लिए तैयार हो गया। मालिक से मिलने पर वकील की जेब गर्म हो गयी, तो वह भी चुप्पी साध गये। तब मैंने यूनियनों की शरण लेनी चाही। इसी प्रकिया में सी.आई.टी.यू के नेता उदयकांत झा से मुलाकात करके सारी कहानी कह सुनाई। वहां उपस्थित उदयकांत झा, ज्ञान सिंह और नागेंद्र शुक्ला ने तत्काल 1500 रुपये बतौर फीस मुझये जमा कराये और कहा कि केस फाइनल हो जाने पर हम अपना 25 प्रतिशत कमीशन भी लेंगे। इसके बाद यूनियन की तरफ से मुआवजा और अपनी मजदूरी प्राप्त करने के लिए डी.एल.सी के वहां मुकदमा डलवाया। मुकदमे की पहली-दूसरी तारीख पर मैं गया ही था कि इसी बीच उदयकांत झा ने मालिक से मिलकर मेरा फर्जी हस्ताक्षर बनवाकर एक कागज तैयार कराया, जिसमें लिखा था कि मैंने 2300 रुपये मुआवजे के रूप में कंपनी मालिक पवन जैन से प्राप्त किया। तारीख लेट होता देख जब मैंने उदयकांत झा से मुलाकात की, तो उन्होंने मुझे धमकाना शुरू किया। उन्होंने कहा कि जाओ घर बैठो! इसी तरह मुकदमे के फेर में पड़ोगे, तो जान से भी हाथ धोना पड़ेगा, मालिक ने गुंडे लगवा रखे हैं। इसके बाद मैं घर लौट आया और सोचने लगा कि सारा कानून, सारे-के-सारे ट्रेड यूनियन वाले जो दुकान खोलकर बैठे हुए हैं सब पूंजीपतियों के दलाल बन चुके हैं। ये लोग मजदूरों से भी खून पसीने की कमाई निचोड़ते हैं और ऊपर से मालिकान से भी। इतना कुछ झेलने के बाद ही मेरी समझ में यह बात आई कि जब तक कम से कम नोएडा में मजदूरों का एक जुझारू क्रांतिकारी संगठन नहीं होगा तब तक ये कंपनी के मालिक और उनके दलाल ट्रेड यूनियन हमें लूटते-खसोटते रहेंगे।

- सुखवीर सिंह
जिला-औरैया (उत्तर प्रदेश)

हमारी तबाही उनकी मौज

मैं एक सिलाई कारीगर हूं। पिछले दिनों आपका अखबार पढ़ने को मिला। उसमें हम मजदूरों के जीवन की परिस्थितियों के बारे में छपी रिपोर्टों को पढ़कर अपने जीवन को बदलने की चुनौतियां समझ में आयीं।

मैं पिछले दिनों अपनी काम की परिस्थितियों से बहुत हताश-निराश था। हमारी जिन्दगी क्या ऐसे ही चलती रहेगी? हम सिलाई कारीगर या अन्य मजदूरों की जिन्दगी दर-दर काम ढूंढ़ने में ही घिस जायेगी या इससे उबरने का भी कोई रास्ता है? 'बिगुल' न मिला होता तो मैं भी अंततः भाग्य और नियति की अंधी गली में अपने को खो देता।

हम तमाम सिलाई कारीगर रोज-रोज काम के लिए और अपनी अपनी मजदूरी के लिए महीने के 10 दिन मारे-मारे फिरते हैं। कहीं काम मिला भी तो अगले दस दिनों की भरपाई की कोशिश करने के लिए पशुओं जैसा टूट पड़ते हैं।

इन दिनों मैं नोएडा के डी-27 सेक्टर 11, पी.टी. ग्रुप में काम कर रहा हूं। यहां भी हालत अन्य फैक्टरियों से अलग नहीं है। हमारी इस कम्पनी में 200 मजदूर काम करते हैं। हम ठेके पर काम करने वाले करीब 90 कारीगर हैं। बाकी परमानेंट और कैजुअल में काम करते हैं। हमारे पेमेंट का हाल यह है कि हम मालिकों के आश्वासन पर अपना दिन काटते हैं। कभी 10 तो कभी 15 और कभी-कभी तो मामला 25 तारीख तक टलता जाता है। इस परदेश में हम रोज की रोटी का जुगाड़ कैसे करें, यह समस्या लगातार बनी रहती है। इन्हीं दिक्कतों की वजह से राशन वाले का कर्ज लगातार सिर पर सवार रहता है और देर से किराया देने की मजबूरी की वजह से मकानमालिक की गालियां सुननी पड़ती हैं। हमारी इस कम्पनी में सस्थायी लोगों के ओवरटाइम का हिसाब एक वर्ष बाद होता है। ठेकेदार से अगर मांगें तो वह अपनी धमकी और बेचारगी दोनों प्रकट करता है। उसके पास टका सा जवाब होता है कि "अभी मुझे ही पेमेंट नहीं मिला है तो मैं तुम सबको कहां से दूं।"

परमानेंट और कैजुअल मजदूरों की भी हालत हम ठेके और दिहाड़ी पर काम करने वालों से अच्छी नहीं है। बस फर्क यह है कि ये कुछ दिनों टिके रहते हैं और इनका शोषण भी जम कर होता है।

'बिगुल' पढ़ने के बाद यह बात समझ में आयी कि 56-57 साल से हम मेहनत करने वालों के साथ कैसी धोखाधड़ी हो रही है। हमारी ही मेहनत पर जीने वाले ये नेता नौकरशाह और समाज में फैले तमाम परजीवी हमारे ही गर्दन पर सवार होकर बेताल की तरह सवारी गांठ रहे हैं। कारखानेदार और मेहनत करने को कहता है। नेता हमें जाति-धरम के नाम पर बांट रहा है। खुद हम अगड़ा-पिछड़ा, कैजुअल-परमानेंट दिहाड़ी और ठेकेदारी में बंटे हुए हैं। और उन साथियों को क्या कहें जो सिलाई, कढ़ाई या अन्य कुशल काम करने वाले हैं जो अपने को मजदूर कहलाना पसन्द नहीं करते हैं। मैं उनसे यही पूछना

(पेज 4 पर जारी)

बिगुल के पाठक साथियों और शुभचिन्तकों से एक अपील

'बिगुल' के पिछले सात वर्षों का सफर तरह-तरह की कठिनाइयों-चुनौतियों से जूझते गुजरा है। इस दौरान अनेक नये हमसफर हमारी टीम से जुड़े हैं और पाठक-साथियों का दायरा भी काफी बढ़ा है। कहने की जरूरत नहीं कि अब तक का कठिन सफर हम अपने हमसफरों और शुभचिन्तकों के संग-साथ के दम पर ही पूरा कर सके हैं। हालात संकेत दे रहे हैं कि आगे का सफर और अधिक कठिन और चुनौती भरा ही नहीं बल्कि जोखिमभरा भी होगा। हमें विश्वास है कि हम अपने दृढ़संकल्प और हमसफर दोस्तों की एकजुटता के दम पर आगे ही बढ़ते रहेंगे।

'बिगुल' अपने पुरअसर तेवर और अपने विशिष्ट जुझारू अंदाज के साथ आपके पास नियमित पहुंचता रहे, इसके लिए अखबार के आर्थिक पहलू को और अधिक पुख्ता बनाना जरूरी है। जाहिर है कि यह अपने संगी-साथियों और शुभचिन्तकों की मदद के बिना मुमकिन नहीं। हमारी आपसे पुरजोर अपील है कि :

- **बिगुल के स्थायी कोष के लिए अधिकतम संभव आर्थिक सहयोग भेजें।**
- **जिन साथियों की सदस्यता समाप्त हो चुकी है वे यथाशीघ्र नवीनीकरण करा लें।**
- **बिगुल के नये सदस्य बनायें।**
- **बिगुल के वितरण को और व्यापक बनाने में सहयोग करें।**
- **कुछ वितरक साथियों के पास बिगुल के कई अंकों की राशि बकाया है। इसे यथाशीघ्र भेजकर बिगुल नियमित प्राप्त करना सुनिश्चित कर लें।**

सहयोग राशि बैंक ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से सम्पादकीय कार्यालय के पते पर भेजें। बैंक ड्राफ्ट 'बिगुल' के नाम से भेजें।

-सम्पादक

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मजदूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मजदूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मजदूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल

सम्पादकीय कार्यालय : **69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006**
सम्पादकीय उपकार्यालय : **जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ**
दिल्ली सम्पर्क : **29, यू.एन.आई. अपार्टमेण्ट, जीएच-2, सेक्टर-11, वसुंधरा-गाजियाबाद-201010**
ईमेल : bigulakhbar@hotmail.com

मूल्यः एक प्रति-रु. 3/- वार्षिक-रु. 40.00 (डाक खर्च सहित)

बिगुल

'जनचेतना' की सभी शाखाओं पर उपलब्ध :
1. **डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020**
2. **जनचेतना स्टाल, काफी हाउस बिल्डिंग, हजरतगंज, लखनऊ (शाम 5 से 8 बजे तक)**
3. **जाफरा बाजार, गोरखपुर-273001**
4. **989, पुराना कटरा, यूनिवर्सिटी रोड, मनमोहन पार्क, इलाहाबाद**
5. **जनचेतना सचल स्टाल (ठेला) चौड़ा मोड़, नोएडा (शाम 5 से 8)**

मेहनतकश साथियों के लिए जरूरी कुछ पुस्तकें

कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन और उसका ढांचा -लेनिन 5/-
मकड़ा और मक्खी -विल्हेल्म लीब्कनेख्त 3/-
ट्रेड यूनियन काम के जनवादी तरीके -सर्जी रोस्तोवस्की 3/-
अनवश्वर है सर्वहारा संघर्षों की अग्निशिखाएं 10/-
समाजवाद की समस्याएं, पूंजीवादी पुनर्स्थापना और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति 12/-
क्यों माओवाद? 10/-
बुर्जुआ वर्ग पर सर्वतोमुखी अधिनायकत्व लागू करने के बारे में 5/-
मई दिवस का इतिहास 5/-
अक्टूबर क्रान्ति की मशाल 12/-
पेरिस कम्यून की अमर कहानी 10/-

बिगुल विक्रेता साथी से मांगें या इस पते पर 17 रु. रजिस्ट्री शुल्क जोड़कर मनीआर्डर भेजें: **जनचेतना, डी-68, निराला नगर, लखनऊ।**

गोधरा का सच फासिस्टों की नजर से देखो! वरना...

फासिस्ट सच्चाई का सामना नहीं कर सकते। ठीक उसी तरह, जैसे चमगादड़ रोशनी का सामना नहीं कर पाता। फासिस्ट एक झूठ को सौ बार बोलकर सच बना देने में विश्वास करते हैं। सच्चाइयों पर पर्दा डालते हैं। ये सत्य और न्याय की राह पर चलने वालों को अपना शत्रु मानते हैं। लूट और मुनाफे पर टिकी जो व्यवस्था इन मनोरोगियों को पैदा करती है उसे उखाड़ फेंकने वालों से ये दिली नफरत करते हैं। सहज मानवीय गुणों से वंचित ये फासिस्ट कला, साहित्य, संस्कृति सहित जीवन के हर क्षेत्र में रोड़ा बनकर खड़े हो जाते हैं। नस्ल और धर्म ही नहीं, बल्कि हर क्षेत्र में ये अपनी ठेकेदारी जताते हैं। इनकी नीयत, इनकी करतूतों को कोई बेनकाब करने की जरा-सी भी कोशिश करे तो उसे काट खाने को दौड़ते हैं।

अभी पिछले ही दिनों फिल्म निर्देशक शुभ्रदीप चक्रवर्ती के एक वृत्त चित्र 'गोधरा तक : द टेरर ट्रेल' को विश्व हिन्दू परिषद ने अपना निशाना बनाया। जाहिर है कि गोधरा कांड की असलियत पर डाले गये झूठ के पर्दे को कोई हटाने की जुर्रत करे, इसे हिन्दू फासीवादी कैसे बर्दाश्त कर सकते थे? विश्व हिन्दू परिषद ने निर्देशक को न सिर्फ गुजरात से भाग जाने के लिए कहा, बल्कि यह चेतावनी भी दे डाली कि देश के किसी भी कोने में इस वृत्त चित्र का प्रदर्शन करने का अंजाम बुरा होगा।

दरअसल, संघ गिरोह इस बात से बौखलाया है कि उसके "गुजरात प्रयोग" पर आम जनता थूकने लगी है। कुछ समय पहले ही गोधरा कांड के पीड़ितों ने एकजुट स्वर में विश्व हिन्दू परिषद का विरोध किया था और यह अपील की थी कि अयोध्या मार्च पर रोक लगाई जाये। गुजरात नरसंहार का सरगना नरेन्द्र मोदी और पूरा गिरोह इस बात से परेशान है कि उनके द्वारा गढ़े गये गोधरा के किस्से की दिन प्रतिदिन बखिया उधड़ रही है। 'गोधरा तक : द टेरर ट्रेल' वृत्तचित्र में भी इस बात की खोजबीन करने की कोशिश की गई है कि आखिर साबरमती एक्सप्रेस में आग कैसे लगी? इसके लिए फोरेंसिक विशेषज्ञों की राय, घटना के शिकार लोगों, उस ट्रेन में सफर कर रहे यात्रियों के बयान और अन्य तथ्यों का सहारा लिया गया है। स्पष्ट है कि यदि गोधरा कांड की अभी तक प्रचलित कहानी ही वृत्तचित्र में दिखाई जाती, तो निर्देशक पर हमला न हुआ होता।

गोधरा में ट्रेन में लगी आग और उसके बाद हिन्दू साम्प्रदायिक फासिस्टों द्वारा मुसलमानों के सुनियोजित कत्लेआम को फासिस्ट सरगना नरेन्द्र मोदी ने "क्रिया-प्रतिक्रिया के नियम" के रूप में पेश किया था। लेकिन गुजरात नरसंहार के बाद एक-एक कर सामने आ रहे तथ्य इस संदेह को आधार दे रहे हैं कि कहीं "क्रिया" के पीछे वही खूनी हाथ तो नहीं थे जिन्होंने "प्रतिक्रिया" को अंजाम देने की लम्बी तैयारी की थी?

● मोहन

मुम्बई के कपड़ा मजदूरों की बदहाली का कड़वा सच

अक्सर इस तरह की बातें सुनने को मिलती हैं कि देश भर के 90 फीसदी मजदूर असंगठित क्षेत्र के हैं और मात्र 10 फीसदी संगठित। दूसरी ओर दुनिया भर में ट्रेड यूनियनों के 20 करोड़ से भी ज्यादा सदस्य हैं। भारत के ट्रेड यूनियन इसी 10 फीसदी आबादी के दम पर अपनी-अपनी दुकानें चलाते हैं सच्चाई तो यह है कि मजदूर आंदोलन के कमजोर पड़ने और आर्थिक उदारीकरण-निजीकरण के दौर में संगठित क्षेत्र भी बिखर रहा है। ज्यादातर ट्रेड यूनियन तो घोर अवसरवाद, दलाली और निकम्मेपन के कीचड़ में धंस चुके हैं। इसकी कहानी बयान होती है मुंबई के गिरणी कामगारों (कपड़ा मजदूरों) की व्यथा में। मुम्बई की बंद होती कपड़ा मिलें ओर वर्षों से कुछ पाने के इंतजार में बैठे गिरवी कामगारों के हालात आज भारत में मजदूर आंदोलन की स्थिति का एक दर्पण है।

मुम्बई में 1970 के दशक तक कोलाबा से दादर तक 96 कपड़ा मिलें थीं और उनमें लगभग ढाई लाख मजदूर तीन शिफ्टों में काम किया करते थे। मजदूरों की यह संख्या घटकर इस साल मात्र पचास हजार रह गई। अब उनमें से भी और 10 हजार मजदूर बेरोजगार हो रहे हैं क्योंकि राष्ट्रीय कपड़ा निगम (एनटीसी) ने पिछले दिनों 12 कपड़ा मिलों को बंद करने का निर्णय ले लिया है। छह सौ एकड़ में फैली इन मिलों की जमीन पर बड़ी-बड़ी रिहायशी इमारतें, शापिंग सेंटर, क्लब, मनोरंजन केंद्र, रेस्तरां आदि बनाये जा रहे हैं। दूसरी ओर, मजदूरों को उनका बकाया पैसा तो नहीं ही दिया जा रहा है, उनके लिए बने घरों को भी उजाड़ा जा रहा है। उनके पुनर्वास की कोई गारंटी नहीं दी गई है। हजारों ऐसे मजदूर हैं जो बकाया पैसा पाने के लिए लगातार कानूनी लड़ाई लड़ रहे हैं। लेकिन उन्हें कोई मंच नहीं मिल पा रहा है। जिन्हें पैसे मिल गये थे वे छिटपुट कामों से गुजर-बसर कर रहे हैं, मसलन, पान-बीड़ी की गुमटी और सब्जी के ठेले लगाना।

मुम्बई की 96 कपड़ा मिलों में मात्र 20 मिलें ही ऐसी हैं जो किसी तरह से चल पा रही हैं। बाकी या तो बंद हो चुकी हैं या बंद होने की स्थिति में हैं। जिन 25 मिलों को एनटीसी ने अपने हाथ में ले लिया था उनमें से 12 को बंद किया जा रहा है। लगभग 10-12 हजार मजदूर फिर से सड़क पर आ जायेंगे। निजी मिलों में मात्र 8 मिलें चालू हैं। बंद मिलों में सिर्फ एक दर्जन मिलें ही ऐसी हैं जहां मजदूरों को पैसे मिले हैं। एनटीसी के पास 265 एकड़ जमीन है, उसमें से 190 एकड़ जमीन बेचने की तैयारी चल रही है।

मजदूरों की इस बेरोजगारी के भयावह सामाजिक परिणाम भी सामने आ रहे हैं। बहुत से मजदूर अपने-अपने गांव लौट गये हैं। लेकिन गांवों में अब

(पेज 6 पर जारी)

अब आला अदालत का स्त्री-अधिकारों पर कुठाराघात

विधायिका और कार्यपालिका से तो जनता का विश्वास उठ ही चुका था, अभी हाल की कुछ घटनाओं पर गौर करें तो महसूस होगा कि न्यायपालिका भी अब भरोसे के काबिल नहीं रह गई है। जहां एक ओर न्याय की तलाश में लोग सालों दर-दर भटकते रहते हैं वहीं दूसरी ओर अपने तमाम अतार्किक और घोर जन विरोधी फैसले सुनाकर अदालतों ने गरीब जनता को घोर निराशा के गर्त में ढकेल दिया है।

यहां हम चर्चा कर रहे हैं महिलाओं को इन्हीं अदालतों द्वारा प्राप्त उन अधिकारों की, जिन्हें हाल ही में देश की सर्वोच्च अदालत ने छीन लिया।

पुलिस प्रशासन की ज्यादतियों से महिलाओं की रक्षा करने के लिए देश की अदालतों ने कई तरह के निर्देश जारी किये थे। इनमें शामिल थे 'सूर्योदय के पहले और सूर्यास्त के बाद किसी महिला की गिरफ्तारी नहीं', 'तलाशी के लिए महिला अधिकारी की मौजूदगी' 'गिरफ्तारी के समय महिला अधिकारी का अवश्य उपस्थित होना', तथा इस तरह के अन्य अधिकार जो किसी महिला को पुलिसिया गुण्डई से थोड़ी राहत दे सकते थे।

इन तमाम अधिकारों को छीन लेने वाले आला अदालत के इस नये आदेश के बाद उम्मीद की जा सकती है कि पुलिस द्वारा स्त्रियों पर ढाये जाने वाले अत्याचारों की फेहरिस्त और लम्बी हो जायेगी।

देश की सबसे बड़ी संगठित गुंडा शक्ति के तौर पर कुख्यात तथा गिरफ्तारी के दौरान होने वाली अनेक मौतों और मारपीट की घटनाओं को नजरअंदाज करते हुए, सिर्फ कानून के पालन में होने वाली देरी तथा अन्य व्यावहारिक परेशानियों को बहाना बनाकर जो फैसला न्यायालय ने सुनाया है उससे समूचा स्त्री समाज सिर्फ खौफ ही खा सकता है। गौरतलब है कि एक लम्बे संघर्ष और आंदोलन के उपरांत महिलाओं ने इन अधिकारों को प्राप्त किया था।

'महिलाओं को सिर्फ महिला लाकअप में रखने की व्यवस्था' तथा 'जांच के लिए उन्हें पुलिस स्टेशन न बुलाये जाने का अधिकार' जहां एक ओर महिलाओं को दमन-उत्पीड़न से बचाता था वहीं दूसरी तरफ उन्हें समाज में इज्जत से जीने का मौका भी प्रदान करता था। सर्वोच्च न्यायालय के इस फैसले तथा इस तरह के अन्य तमाम फैसलों को ध्यान से देखने पर साफ पता चलता है कि अदालतों का रुख मेहनतकश जनता और समाज के अन्य कमजोर तबकों के प्रति किस प्रकार बदलता जा रहा है।

पहले से ही जहां लम्बी और खर्चीली न्याय प्रक्रिया आम जनता को हतोत्साहित कर देती थी वहीं आजकल के नये फैसले बुर्जुआ अदालतों के असंवेदनशील चरित्र को उजागर कर साधारण जनता के दुखों के बोझ को और भारी कर देते हैं।

पहुंच और पैसे के जोर पर अमीर लोग तो बच निकलते हैं पर गरीब मेहनतकश लोग पुलिस और न्यायालय के दो पाटों के बीच पिस कर रह जाते हैं। इस हालत में तो यही कहा जा सकता है कि भारतीय न्यायप्रणाली में देर ही नहीं अंधेर ही अंधेर है।

● जयपुष्प

बिहार के सरकारी उपक्रमों के कर्मचारियों की बदहाली का अन्त नहीं

आसमान से गिरे खजूर पर अटके!

"आसमान से गिरा खजूर पर अटका"-यह कहावत तब पूरी तरह चरितार्थ हुई जब पटना हाईकोर्ट ने वहां के सरकारी उपक्रमों के 22 हजार कर्मचारियों को आदेश जारी किया कि वे दस साल से बाकी अपना वेतन अपनी नौकरी के कागजात कोर्ट में जमा करके ले जायें।

बिहार राज्य में लगभग 49 सरकारी उपक्रम हैं, जिसमें से 19 उपक्रम झारखण्ड में चले गये हैं। इन उपक्रमों में से कुछ को तो बन्द किया जा चुका है और शेष को घाटे में दिखाकर सरकार अब बन्द करने वाली है। इन उपक्रमों में काम करने वाले लगभग 22 हजार कर्मचारियों का वेतन दस सालों से नहीं मिला है।

पटना हाईकोर्ट का फरमान : दस साल से बकाया पगार लेनी है तो नौकरी के कागजात कोर्ट में जमा करो!

इन कर्मचारियों के घरों की स्थिति यह है कि बच्चों की पढ़ाई-लिखाई भी बन्द हो चुकी है और आर्थिक अभाव ने उनकी लड़कियों की शादी भी रुकवा दिया है। कर्मचारियों की चिन्ताएं, इस कदर बढ़ती जा रही है कि इन दस सालों में 1432 लोगों की मौत भी हो चुकी है ओर अभी तक ये जारी हैं। इन उपक्रमों के कर्मचारी 'बिहार राज्य सरकारी लोक उपक्रम बचाओ संघर्ष मोर्चा' के बैनर तले उपक्रम को चालू रखने और अपने वेतन के लिए लगातार धरना प्रदर्शन करते रहे हैं किन्तु जब बिहार राज्य प्रशासन अपने हत्यारे इरादों से बाज नहीं आया तब कर्मचारियों ने न्याय के लिए सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया। सुप्रीम कोर्ट ने पटना हाईकोर्ट को आदेश दिया कि राज्य सरकार से कर्मचारियों का वेतन भुगतान कराया जाये। पटना हाईकोर्ट ने राज्य सरकार से 50 करोड़ रुपये अपने पास जमा कराया है और यह आदेश जारी किया कि कर्मचारी तीन सप्ताह के भीतर अपनी नौकरी के कागजात जमा करके अपना वेतन ले जायें। यह आदेश पिछले 9 मार्च को दिया गया। इस बीच भी कर्मचारियों की मौतें और आत्महत्याएं बदस्तूर जारी रहीं।

हाईकोर्ट के इस फरमान को सुनकर कर्मचारियों की चिन्ताएं और भी बढ़ गयी हैं। क्योंकि पिछले दस सालों के अन्दर अनेक कर्मचारियों के गांवों में कई-कई बार बाढ़ आ चुकी है और उनकी नौकरी के कागजात या तो बाढ़ में बह-बिला चुके हैं या पानी में डूबने के कारण सड़-गल कर मिट्टी बन चुके हैं। अब कर्मचारियों को यह बात नहीं समझ आ रही है कि पटना हाईकोर्ट ने कर्मचारियों की नौकरी के कागजात जमा करने की जिम्मेदारी सरकारी कार्यालयों एवं उपक्रमों के अधिकारियों पर क्यों नहीं डाली है?

कर्मचारी अब इसी पशोपेश में पड़े हुए हैं कि करें तो क्या करें? जब वे उपक्रम में काम करते थे तो अधिकारियों के कानून का डण्डा उनके ऊपर; उपक्रम बन्द हुआ तो आर्थिक अभाव की गाज उनके ऊपर और अब जब अपनी मेहनत की कमाई लेनी है तो सारे कागज-पत्तर की जिम्मेदारी भी उनके ऊपर। फिर लोकतंत्र का ढोल पीटने वाली इस लुटेरी व्यवस्था की पूरी नौकरशाही, न्याय-अदालतों का काम क्या है?

● नन्हेलाल

ईस्टर के मजदूरों की गर्दन पर लटकती छँटनी की तलवार

मजदूरों को हार की मानसिकता से उबरना होगा

बिगुल संवाददाता

खटीमा (ऊधमसिंह नगर)। यहां के ईस्टर इंडस्ट्रीज लि. के मजदूर लगातार मानसिक संत्रणा के दौर से गुजर रहे हैं। सर पर लटकती छंटनी की तलवार कब किसकी गर्दन पर गिर जाये यह किसी भी मजदूर को नहीं मालूम।

लगभग दो वर्ष पूर्व चले मजदूर आंदोलन की पराजय के बाद निकाले गये 28 मजदूर अभी भी कोर्ट-कचहरी के चक्रव्यूह में फंसे हुए हैं। उसके बाद से 4 मजदूरों को तो प्रबंधन सीधे निकाल चुका है और 60 मजदूरोंको तरह-तरह की तीन-तिकड़मों से वीआरएस का झुनझुना पकड़ाकर बाहर का रास्ता दिखा दिया गया है।

कारखाने में इस वक्त सबसे अधिक संकटग्रस्त यार्न प्लान्ट के 51 मजदूर हैं। यह प्लान्ट इस वर्ष की पहली अप्रैल से बंद हैं। प्रबंधन इस प्लान्ट के मजदूरों पर लगातार यह मानसिक दबाव बना रहा है कि वे भी वीआरएस लेकर बाहर चले जायें, लेकिन इस प्लान्ट के मजदूरों की एकता के कारण प्रबंधन अभी तक अपनी योजना में कामयाब नहीं हो सका है। प्रबंधन ने मजदूरों से दीवाली तक सोच लेने का एक और मनोवैज्ञानिक खेल खेला। हालांकि, प्रबंधन ने इस प्लान्ट के मजदूरों को दीवाली पर मिलने वाले 14 दिन के बोनस का भुगतान नहीं किया है। मजदूरों ने प्रबंधन के इस रवैये के विरोध में दीवाली पर 'भेंटस्वरूप' मिलने वाली मिठाई नहीं ली। प्रबंधन मजदूरों से कहता है कि उसने प्लान्ट बेच दिया है। उसकी बदनीयती इसी बात से प्रमाणित होती है कि वह बेचने की मौखिक बात तो करता है, लेकिन कोई लिखित नोटिस जैसी कार्यवाही नहीं करता है। वह मजदूरों को दूसरे प्लान्ट में भेजने की जगह बैठाकर 6 माह से वेतन दे रहा है, ताकि मजदूरों पर मानसिक दबाव बना रहे।

प्रबंधन ने मैकेनिकल के भी कुछ मजदूरों को काम से अलग करके बैठा दिया है। कारखाने में यह भी चर्चा फैली हुई है कि प्रबंधन फिल्म प्लान्ट में ढाई टन की जगह आठ टन की मशीन लगाने वाला है और इस प्लांट के मजदूर भी फालतू हो जायेंगे। इसके साथ ही यूटीलिटी और वर्कशॉप के मजदूर अतिरिक्त करार दिये जाएंगे। कारखाने में चर्चा यह भी है कि हेवी जनरेटर स्थापित करके कई औरों के रोजगार भी प्रबंधन छीन सकता है। तथाकथित रूप से फर्जी कागजात के बहाने मजदूरों को निकालने के बाद वह दूसरी तीन-तिकड़मों से छंटनी पर आमादा है।

दूसरी तरफ, कारखाने में मौजूद दोनों यूनियनें फिलहाल कोई ठोस कदम उठाने की स्थिति में नहीं दिख रही हैं। कारखाने की मुख्य यूनियन'ईस्टर इंडिया इंप्लायज यूनियन' बीच-बीच में संघर्ष का प्रयास करती नजर आती भी है,लेकिन दूसरी यूनियन एकदम से खामोश है।

उधर, कारखाने के मजदूर इन स्थितियों में बेहद मानसिक यंत्रणा को झेल रहे हैं, लेकिन वे डरे हुए और सहमे से हैं। ईस्टर के ये वही मजदूर हैं, जिन्होंने कई लंबे संघर्ष किये हैं, जिनके कई साथियों ने कुर्बानियां दी हैं। स्थिति को समझने के बावजूद यहां मजदूर हार की मानसिकता से उबर नहीं पा रहा है।

निश्चित रूप से ईस्टर के मजदूरों को इस मानसिकता से उबरना होगा, अपने भीतर के भय को दूर करना होगा और अपनी एकजुटता को मजबूत करना होगा। कारखाने की मौजूदा दोनों यूनियनों की एकजुट होकर संघर्ष की कोई रणनीति बनानी होगी। यदि संकट की इस घड़ी में भी नेतृत्व का कोई हिस्सा निहित स्वार्थ में डूबा रहा, तो प्रबंधन अपनी कुत्सित चालों में सफल होता जायेगा।

उत्तरकाशी में फिर भूस्खलन, सैकड़ों परिवार विस्थापित

मुनाफे की बेलगाम लूट से आयी विपदा

गढ़वाल संवाददाता

नवगठित उत्तरांचल की वरुणावत पर्वतमाला (उत्तरकाशी नगर) में हुए हालिया भूस्खलन के बाद जागी सरकार के नुमाइन्दे राहत कार्यों की घोषणाएं करने और घड़ियाली आंसू बहाने में जुट गए हैं। इसके बावजूद पहाड़ी जनता बाजार और मुनाफे पर केंद्रित इस व्यवस्था की संवेदनहीन चौकीदार यानि सरकार पर विश्वास नहीं कर पा रही है। इसका आधार सालों से जनता के साथ बरता जा रहा भेड़-बकरियों जैसा बर्ताव ही है।

दरअसल, मुनाफे पर आधारित व्यवस्था को चलाने वाली सरकार आम जनता की दुख-तकलीफों के बजाय मुनाफाखोरों की तिजोरियां भरने पर ध्यान देती है। चाहे वह भाजपा की कोश्यारी सरकार रही हो या एन.डी.तिवारी सरकार। जगह-जगह से प्राप्त हो रहे तथ्य भी सरकार की संवेदनहीनता को चीख-चीख कर बता रहे हैं। उल्लेखनीय है कि 1991 में उत्तरकाशी में आए भूकंप से पहले और बाद में अनेक भू-वैज्ञानिक शोधों के माध्यम से विभिन्न सरकारों को चेतावनी दे चुके हैं कि यह पर्वतमाला अति संवेदनशील है और भूस्खलन को रोकने के लिए ठोस कदम उठाए जाने चाहियें। 1992 में भू-वैज्ञानिक डा.खड्क सिंह वालिया की रिपोर्ट आने के बाद तो सुप्रीम कोर्ट ने निर्माण कार्यों को संतुलित करने और 100 से अधिक स्थानों पर निर्माण प्रतिबंधित करने का आदेश भी दिया था। इसके बावजूद पिछले 10 सालों में वरुणावत पर्वत की तीखी ढलानों का ख्याल न करते हुए उसकी तलहटी में करीब 500 पट्टों की फाइलें स्वीकृत हुई हैं, जिनमें आलीशान होटलों, पबों, संस्थानों को जमीन दी गयी है (यानि केंद्र में फिर वही-मुनाफा)।

लोक निर्माण विभाग के निर्माण कार्यों की तकनीकी खामियों के विषय में भी सरकार को भूगर्भ वैज्ञानिक और भूस्खलन विशेषज्ञ आर.एन. बलागन कई बार अवगत करा चुके थे। भूस्खलन को रोकने के लिए रिटेनिंग वॉल, ब्रेस्ट वॉल, ड्रिल वॉल बनाने जैसे महत्वपूर्ण सुझाव दिए गए थे, लेकिन ये सुझाव ठंडे बस्ते में पड़े रहे। बताया जाता है कि सरकार वरुणावत पर्वत की दरारों से भी अनभिज्ञ नहीं थी, लेकिन उसने इसे गंभीरता से नहीं लिया। सरकार की इन लापरवाहियों का ही नतीजा है कि हालिया भूस्खलन के चलते सैकड़ों परिवार विस्थापित हो गए और करीब डेढ़ सौ परिवार अस्थायी राहत शिविरों में रहने को मजबूर हैं। राज्य मशीनरी की संवेदनहीनता का पता इससे भी चलता है कि अब तक हुए नुकसान का आकलन 500 करोड़ रुपये से अधिक का होने पर भी सरकार ने राहत कार्यों के लिए महज 8.5 करोड़ रुपये दिये हैं।

मुनाफाखोरों की मैनेजिंग कमेटी के रूप में काम कर रही सरकार की तरह ही बुर्जुआ मीडिया भी भूस्खलन की जड़ तक जाने के बजाय इससे महज प्राकृतिक आपदा साबित करने की पुरजोर कोशिश में जुटा है। इस तरह फैलाये जा रहे कुहासे के चलते ही बहुसंख्यक पहाड़ी आबादी यह नहीं समझ पा रही है कि पहाड़ों की अकूत प्राकृतिक संपदा को लूट कर अपनी तिजोरियां भरने वाले ठेकेदार, भूमाफिया, वन माफिया आदि भांति-भांति के मुनाफाखोर ही पर्यावरण संतुलन बिगाड़ने के असली जिम्मेदार हैं। चूंकि मुनाफे पर आधारित व्यवस्था आम आदमी को भी महज मुनाफा बटोरने का साधन समझती है, इसलिए इस व्यवस्था के लिए यह सोचना असंभव है कि पेड़ों-पर्वतों की अंधाधुंध कटाई और अनियोजित निर्माण से जन-जीवन पर क्या असर पड़ेगा।

आपस की बात

मजदूर : मुनाफा कमाने की मशीन

मैं बिगुल का एक पुराना पाठक हूं। मुझे बिगुल का इन्तजार रहता है-हमेशा।

इस औद्योगिक शहर लुधियाना के दशमेशनगर (गिल रोड) में मकान नं. 823, गली नं. 5 में बैरी प्रोडक्ट्स नाम की एक फैक्टरी है। यह लोहे के पार्ट्स बनानेवाली बहुत पुरानी फैक्टरी है जिसका मालिक शुकदेव सिंह है। फैक्टरी का बोर्ड बाहर की बजाय भीतर छुपाकर रखा है। इसके अन्दर लगभग 20-25 मजदूर हर दिन सुबह 8 बजे से रात 9 बजे तक मशीनों के साथ मशीन बनकर काम करते हैं।

फैक्टरी की हालत यह है कि 15-15 साल से काम करने वाले पुराने वर्करों का भी नाम पक्के रजिस्टर में दर्ज नहीं है। वेतन 1200 रु. से 2000 रु. के बीच है। किसी भी मजदूर को ई.एस.आई. कार्ड नहीं मिला है जबकि हर महीने 20 से 35 रुपये तक इसका शुल्क वेतन से काट लिया जाता है। सोमवार या शनिवार को ड्यूटी नहीं करने पर रविवार की छुट्टी काट ली जाती है। कोई न कोई बहाना बनाकर पुराने वर्करों का निकालना जारी है। फैक्टरी के अन्दर किसी प्रकार का छोटा या बड़ा एक्सीडेंट हो जाने पर बिना इलाज कराये भगा दिया जाता है। छोटी-छोटी बातों पर गाली दे देना या थप्पड़ मार देना या घर से आयी चिट्ठी-पत्री नहीं देना, फाड़कर फेंक देना आदत सी बन गयी है।

-एक वर्कर, लुधियाना

हिन्दुत्व का नंगा रूप

अब मैं बिगुल का नियमित पाठक हूं। चाचा इसे हर महीने लेते हैं और मैं इसे हमेशा पढ़ता हूं। पूरा पढ़ने के बाद एक ही निष्कर्ष समझ में आता है-मजदूरों-किसानों की लड़ाई आप दिलोजान से लड़ रहे हैं। राहुल सांकृत्यायन की किताब 'तुम्हारी क्षय' का धारावाहिक प्रकाशन काफी अच्छा है। 'बकलमे-खुद' स्तम्भ में एक कॉलम (हर अंक में) क्या कविताओं का नहीं हो सकता?

गोरखपुर में विश्व हिन्दू सम्मेलन को देखकर मन एकदम खिन्न हो गया। अभी गुजरात की आग बुझी नहीं है कि हिन्दुत्व का नंगा रूप, खूनी रूप हम भूल जायें।

-निरन्तर कुमार, गोरखपुर

(पेज 2 से आगे)

चाहता हूं कि क्या बेलदारी या हेल्परी करने वालों से हमारी समस्यायें अलग हैं? भले ही हम काम करने में कुशल हों या अकुशल, मालिकों, मैनेजरों सुपरवाइजरों की गालियां और शोषण-उत्पीड़न हमारे बीच कुछ फर्क नहीं करते हैं। लुटेरों की नजर में हम एक हैं। इसीलिए तो वह हमें एक ही डंडे से हांकता है और एक साथ हमारा खून निचोड़ता है।

तो! यह है हमारी हालत। जब हमारी परेशानियां एक हैं तो इनसे उबरने का रास्ता भी एक होगा। इसी उम्मीद और आशा से मैं यह पत्र लिख रहा हूं कि अकेले-अकेले भुनभुनाने और एक-एक फैक्टरी मालिकों, मैनेजरों, सुपरवाइजरों, ठेकेदारों को गाली देने से कुछ नहीं होगा। हमें यह बात अच्छी तरह समझ लेनी ही होगी कि मालिक और मजदूर कभी एक नहीं हो सकते हैं। हम मजदूरों की तबाही पर मालिक वर्ग गुलछर्रे उड़ा रहा है। हमें संगठित होकर अपने जीवन की बेहतरी के लिए लड़ना ही होगा।

-कन्हैया लाल, नोएडा

जनविरोधी है यह व्यवस्था

देश के धन्धेबाज नेताओं की गद्दारी के चलते आजादी के इतने साल बाद भी आम ग्रामीण जनता की हालत दयनीय होती जा रही है। उत्तर प्रदेश में भी पहले की सरकारों की तरह गैरजरूरी मुद्दे उछालकर लोगों को बांटकर जिस तरह मायावती सरकार स्वार्थपूर्ति में जुटी रही, अब मुलायम सरकार भी उसी तरह जनता के लिए कुछ करती नहीं दिख रही है। कहने को गाजियाबाद जिला शहरीकरण और ग्राम विकास के क्षेत्र में लखनऊ के बाद दूसरे नंबर पर आता है, अम्बेडकर गांवों में सम्पूर्ण विकास माना जाता है, लेकिन जमीनी हकीकत कुछ और ही है।

उदाहरण के लिए 1992 से ही विकसित नोएडा के छिजारसी गांव और माया मैडम के पैतृक गांव बादलपुर का ही बार-बार विकास किया जा रहा है। माया सरकार द्वारा कथित रूप से विकसित किये गये नोएडा सेक्टर-62 के गांवों को संघर्षशील युवा संगठन के आंदोलन के बाद 1992 में ही विकसित किया जा चुका है, जबकि हालात ये हैं कि दावे तो बहुत किये जाते हैं, मगर ग्रामीणों की तकलीफों की ओर सरकारी तंत्र ध्यान नहीं देता।

इसका एक नमूना है गाजियाबाद जिले की मोदीनगर तहसील से निकलने वाला 50 साल से भी पुराना रजवाहा-तिबड़ा माइनर। यह माइनर खंजरपुर गांव से होते हुए मछली-भोजपुर पट्टी तक जाता है, जो कि अब गंदे नाले में तबदील हो चुका है और हैजा एवं अन्य संक्रामक बीमारियों के फैलने का कारण बन रहा है। इस पूरे क्षेत्र में उन दवाओं की बिक्री धड़ल्ले से हो रही है जो सरकारी अस्पतालों में मुफ्त मिलती हैं। 'बिक्री के लिए नहीं' लिखी इन दवाओं में से कई की मीयाद पूरी हो चुकी होती है। ऐसा असंभव है कि सरकारी तंत्र को इसकी जानकारी न हो। इसके बावजूद इन समस्याओं को अनदेखा करना यह साबित करता है कि यह व्यवस्था आम जनता की हितैषी नहीं है।

-वी.एस. 'उज्जैनवाल'
नवादा, नोएडा

दायित्वबोध

उन बुद्धिजीवियों की पत्रिका जिन्होंने जनता का पक्ष चुना है

नये अंक की प्रमुख सामग्री

इराक : मदमत्त हाथी फिर दलदल में • फिलस्तीन : शान्ति की शर्त मुकम्मल आजादी • मार्क्सवाद पर अम्बेडकर के विचार-रंगनायकम्मा का विचारोत्तेजक निबंध • साम्राज्यवाद के बारे में • दूरसंचार का निजीकरण-निकोलस बरान • महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज • पूँजीवादी निवेश के कारण तबाह हो रहे हैं गरीब किसान-निर्मल सिंह आजाद • स्तालिन के निधन के पचास वर्ष बाद • अन्य सामग्री

संपादकीय पता :

29, यू.एन.आई अपार्टमेंट, जीएच-2, सेक्टर-11, वसुंधरा, गाजियाबाद-201010

dayitvabodh@rediffmail.com

एक प्रति : 15 रु. वार्षिक : 72 रु. (डाकखर्च सहित)

मार्गदर्शक

अतीत का आईना
वर्तमान का प्रतिबिम्ब
भविष्य की क्रान्ति का मार्ग
दिखाता है 'बिगुल'।
वर्षो के सुप्त दबे-कुचले अरमानों
को जगाता है,
तूफानी जलधारा को चीर दे
वो पतवार बनाता है 'बिगुल'।
अन्याय के विरुद्ध संघर्ष का
आह्वान है
नव क्रान्ति का वाहक है 'बिगुल'।
चुप्पी की अंधकारमय दुनिया को
भोर की लालिमा दिखाता है 'बिगुल'।
लाख प्रतिकूल हवाएं चलें,
पर्वत-सी अटलता सिखाता है
'बिगुल'।

-भूपेन्द्र कुमार देवांगन, कोरबा (म.प्र.)

मनोरंजन उद्योग की जगमग के पीछे छुपा कामगारों की जिन्दगी का अंधेरा

चिकनी–चुपड़ी बातों और मामूली सुविधाओं की छौंक लगाकर मुनाफा पीट रहे हैं टी–सीरीज कम्पनी के मालिकान

बिगुल संवाददाता

नोएडा। सिनेमा और संगीत की दुनिया की मोहक छवियों और जादुई आवाजों को करोड़ों लोगों तक पहुंचाने वाली नामचीन कम्पनी टी-सीरीज! सुपर कैसेट्स इण्डस्ट्रीज! स्व. गुलशन कुमार द्वारा कायम की गयी इस कम्पनी का नाम और उसकी कामयाबी की कहानियां आज घर-घर पहुंच चुकी हैं। लेकिन कम्पनी को कामयाबी की इस चोटी पर पहुंचाने के पीछे जिन कामगारों का खून-पसीना है, उनकी कहानी बहुत कम लोगों को मालूम होगी। बहुत कम लोगों को इस बात का अहसास होगा कि मनोरंजन उद्योग की चमक-दमक के पीछे हजारों कामगारों की जिन्दगी का अंधेरा छुपा हुआ है।

1980 के दशक में स्थापना के समय टी-सीरीज सिर्फ आडियो कैसेट्स बनाने से अपना कारोबार शुरू किया। देखते-देखते यह कम्पनी फिल्म और संगीत की दुनिया की सिरमौर कम्पनियों में शुमार की जाने लगी। आज लगभग बीस साल बाद इसका साम्राज्य काफी बड़ा बन चुका है। अब यह आडियो कैसेट्स ही नहीं वीडियो कैसेट्स, आडियो-वीडियो सी.डी., टीवी व सी. डी. प्लेयर भी बनाती है। कुछ दिनों तक अगरबत्तियां भी कम्पनी बनाती रही लेकिन फिलहाल यह काम बन्द है।

इस समय नोएडा फेज-1 व 2 में टी-सीरीज की लगभग डेढ़ दर्जन फैक्टरियां चल रही हैं। इन फैक्टरियों में कुल मिलाकर लगभग 5000 मजदूर कार्यरत हैं, जिसमें आधी संख्या महिलाओं की है। नोएडा फेज-1 के सेक्टर-3 व 4 में चार-चार कम्पनियां, सेक्टर-6 में 2, सेक्टर-7 में एक, सेक्टर-8 में एक, सेक्टर-11 में 5 और फेज-2 व एन.ई.पी.जेड. में एक-एक कम्पनियां चल रही हैं।

सेक्टर-3 स्थित सी-1, सी-25, 26, 27 की इकाइयों के कुछ मजदूरों से हमने बातचीत की। उनके अनुसार इन इकाइयों में लगभग एक हजार मजदूर काम करते हैं। इनमें लगभग आधी आबादी महिलाओं की है। दिन-प्रतिदिन इन सभी कम्पनियों में महिलाओं की संख्या बढ़ती ही जा रही है। इन्हें इसलिए कम्पनियों में रखा जा रहा है जिससे सस्ते दामों में अधिक से अधिक श्रम निचोड़कर मुनाफा पीटा जा सके।

वैसे यह केवल इसी कम्पनी की बात नहीं है। इस भूमण्डलीकरण के दौर में दुनिया के पूंजीपति महिला मजदूरों को काम देने में आजकल बहुत 'उदार' हो गये हैं। उनकी इस उदारता का कारण समझना कठिन नहीं है। एक जापानी मैनेजर के शब्दों में ये महिलाएं 'बिना चूं-चपड़ किये, नीरस, बेजान और कठिन कामों में घण्टों जुती रह सकती हैं'। यूं भी इस पुरुष स्वामित्ववादी समाज में औरतों को बचपन से ही जिस सामाजिक सांचे में ढाला जाता है और जिस तरह की आज्ञाकारिता और कर्तव्यपरायणता की मानसिकता दी जाती है उसके चलते वे अपने शोषण-उत्पीड़न के खिलाफ बगावत करने के बजाय आंसू बहाते हुए चुपचाप सहती रहती हैं। इसी का भरपूर फायदा आज मुनाफाखोर उठा रहे हैं।

नोएडा की अन्य कम्पनियों की अपेक्षा टी-सीरीज के मजदूरों को 'दाल में नमक' के बराबर थोड़ी बेहतर सुविधाएं मिल जा रही हैं। इसलिए ऊपरी तौर पर मजदूरों में कोई आक्रोश नहीं दिखेगा। जबकि हालत यह है कि इन कम्पनियों में 20 वर्ष से काम करने वाले मजदूरों को भी 2400 रु. से लेकर 4000 तक वेतन मिल रहा है। इससे पुराने वर्कर अन्दर ही अन्दर गुस्से से घुट-घुट कर जी रहे हैं। इनकी आवाजें इसलिए बाहर नहीं जा पा रही हैं क्योंकि उन्हें इस बात का हमेशा डर बना रहता है कि अगर मालिक को पता चला तो निकाल बाहर कर दिये जायेंगे।

इस डर की जमीन एक पुराने आन्दोलन से तैयार हुई है। 1994 में पहली बार टी-सीरीज के मजदूरों ने वेतन बढ़ाने, कैजुअल को परमानेन्ट करने तथा त्योहारों की छुट्टियों की मांगों को लेकर एक जबर्दस्त हड़ताल की थी, जिसको दबाने के लिए मालिकान (स्व. गुलशन कुमार) ने पुलिस प्रशासन और निजी गुण्डा वाहिनियों का भरपूर उपयोग करने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। लेकिन फिर भी मजदूर डटे रहे। बाद में आंदोलन में शामिल सी.आई.टी.यू. और एच. एम.एस. के नेता मजदूरों के साथ गद्दारी करके मालिक से मोटी रकम ऐंठ कर बैठ गये। इन यूनियनों की गद्दारी का परिणाम यह हुआ कि आंदोलन में शामिल लगभग 1500 मजदूरों को निकाल बाहर फेंक दिया गया।

ये मजदूर आज भी दर-दर की खाक छान रहे हैं। आज भी पुराने मजदूर नाखुश हैं क्योंकि पहले मजदूरों को जो सुविधाएं मिल रही थीं उन्हें भी धीरे-धीरे खत्म किया जा रहा है। पहले कम्पनी में मजदूर लंच के लिए केवल रोटी ले जाते थे और सब्जी कम्पनी से मिलती थी। इसे अब खत्म कर दिया गया है। पहले दो टाइम चाय मिलती थी। अब एक टाइम कर दिया गया है।

पहले कम्पनी मजदूर ओवरटाइम करके कुछ अतिरिक्त कमाई कर लेते थे। लेकिन अब पीस रेट पर काम कराने की वजह से ओवरटाइम का अवसर छिन गया है। इस समय कम्पनी में अधिकतर मैनेजर सुपरवाइजर और ठेकेदार मालिकान के नातेदार-रिश्तेदार ही भरे हुए हैं। ठेके पर काम करने वाले लोडरों को भी तीन माह काम कराने के बाद निकाल बाहर कर दिया जाता है। मजदूरों को निकालने के तरह-तरह के बहाने भी मौजूद रहते हैं-जैसे चेकिंग के समय किसी मजदूर के पास बीड़ी-सिगरेट-तम्बाकू पाये जाने पर निकाल बाहर कर देना आम बात है। कम्पनी में रविवार के अलावा साल में कुल 11 छुट्टियां ही मिलती हैं।

कम्पनी के मालिकान ने 1994 के आंदोलन से सबक निकालते हुए अधिकतर नई भर्ती कर ली और नोएडा की अन्य कम्पनियों के मुकाबले थोड़ी-बहुत बेहतर सुविधाएं (जैसे बस से आने-जाने की सुविधा, समय से वेतन की सुविधा) भी दे दिया है। इससे मजदूरों के बीच से मालिकों की तरफदारी करने वाली एक जमात पैदा हुई है। इनमें से कुछ तो मालिकान की चापलूसी करने के साथ ही अपने हक के लिए आवाज उठाने की बात तक नहीं सुनना चाहते।

गुलशन कुमार की मौत के बाद टी-सीरीज की तमाम कम्पनियों का उनके अपने बीवी-बच्चों और भाइयों के बीच बंटवारा हो गया है। सेक्टर-3 स्थित कम्पनियां उनके पुत्र भूषण कुमार के मालिकाने में आयी हैं जो अपनी मां, भाई और परिवार के अन्य सदस्यों के साथ समय-समय पर चेकिंग करने आया करते हैं। मजदूरों को सिर्फ चिकनी-चुपड़ी बातों से खुश करके मजदूरों के अधिक से अधिक श्रम को लूटकर जबर्दस्त मुनाफा पीट रहे हैं।

कम्पनी के अनेक मजदूर मालिकान के इस काइयांपन को समझते भी हैं। लेकिन एकजुट न होने के कारण कुछ भी खुलकर कहने से हिचकते हैं। एक मजदूर ने हिचकते-हिचकते कहा कि ठीक है कि दूसरी कम्पनियों के मुकाबले हमें कुछ बेहतर सुविधाएं हासिल हैं लेकिन क्या इतने में ही खुश होकर हम मालिक का गुणगान करते रहेंगे? क्या हमारे श्रम का बस यही मोल है?

आज हिचकते हुए पूछा गया यह सवाल कल बुलन्द आवाज में उभर सकता है। इसमें कोई शक नहीं। मजदूर कल अपनी मेहनत का असली मोल जरूर समझेंगे! तब चिकनी-चुपड़ी बातों से उन्हें भरमाना मुमकिन नहीं होगा।

हादसा कंपनी में, मुआवजा ई.एस.आई के मत्थे

बिगुल संवाददाता

नोएडा। तथाकथित उदारीकरण के दौर में उद्योगपतियों ने मेहनतकशों का खून और तेजी से चूसना शुरू कर दिया है। उनके समर्थन में सरकारी तंत्र भी बेहयाई पर उतर आया है। ऐसे में नोएडा औद्योगिक क्षेत्र के मुनाफाखोर भी मेहनत की लूट में पीछे नहीं हैं। हालात ये हैं कि इनकी तिजोरियां भरते-भरते किसी मजदूर के साथ कोई दुर्घटना घट जाए, तो यह मुआवजे के नाम पर बैकडेट में बना ई.एस.आई का कार्ड थमा देते हैं।

श्रम कानूनों में फेरबदल, मजदूरों में एकता का अभाव और विभिन्न ट्रेड्यूनियन नेताओं के दोगलेपन के चलते ये लुटेरे बेशर्मी के साथ पुलिस और ई. एस.आई अधिकारियों की मिलीभगत से बैक डेट में ई.एस.आई. कार्ड बनवा कर मुआवजे का जिम्मा ई.एस.आई के मत्थे मढ़ देते हैं। बाद में मजदूर को ईएसआई से मुआवजा मिला या नहीं, इसकी वे परवाह नहीं करते।

नोएडा स्थित 'ए.जी. इंजीनियरिंग कंपनी' की सेक्टर-4 के ए-100 और सेक्टर-6 के जी-37 स्थित दो इकाइयों की स्थिति भी इससे भिन्न नहीं है। इस फॉर्जिंग (ढलाई करने वाली) कंपनी की दोनों इकाइयों में सरिया गला कर गाड़ी के पुर्जे बनते हैं।

कंपनी की सेक्टर-4 स्थित इकाई में कुल पंद्रह मजदूर काम करते हैं, सभी कैजुअल हैं। इसके चलते इनमें से किसी के पास ई.एस.आई. कार्ड नहीं है। बताया जाता है कि यहां प्रत्येक मजदूर से आठ घंटे काम कराने के अलावा लगभग रोज जबरन ओवरटाइम कराया जाता है। ऊपर से नाइट ड्यूटी भी लगा दी जाती है। ओवरटाइम का दुगुना पैसा नहीं दिया जाता। दो-चार घंटे के अतिरिक्त काम को तो ओवरटाइम में शामिल ही नहीं किया जाता। रात में 12 घंटे ओवरटाइम करने पर महज 28 रुपये खाने और नाश्ते के नाम पर मिलते हैं।

बीते 7 अक्टूबर को इसी इकाई में नाइट ड्यूटी करने के तुरंत बाद दिन में ओवरटाइम खटाने पर दिन में 12 बजे एक मजदूर का बायां हाथ मशीन में जा फंसा, जिससे उसके हाथ की एक उंगली कट गई। इस पर मालिक ने तत्काल उस मजदूर से हस्ताक्षर करा कर 3 अक्टूबर, 2003 तारीख का ई.एस.आई कार्ड बनवाया और उसे ई.एस.आई अस्पताल में भर्ती करा दिया। मजदूर ने मालिक से छुट्टी की पगार मांगी, तो मालिक ने यह कहकर भगा दिया कि तेरा खर्चा ई.एस.आई. उठाएगी। महीने भर से काम पर न जाने से उस मजदूर के पास इस समय फूटी कौड़ी भी नहीं है। झुग्गी के किराये और राशन के पैसे न होने के चलते उस पर कर्ज का बोझ बढ़ता जा रहा है। 1600 रुपये पगार में भी परिवार का पेट पालना मुश्किल हो रहा था। ऐसे में आय का स्रोत न होने से उसके सामने जिंदा रहने का संकट पैदा हो गया है।

सेक्टर-6 स्थित इकाई में लगभग 40 मजदूर हैं, जिनमें से लगभग 10 कैजुअल हैं, बाकी परमानेंट। इस इकाई में लगभग दो साल पहले दो मजदूरों की उंगली कट गई थी। इस पर मालिकान ने फर्जी ई.एस.आई कार्ड बनवाकर मुआवजा देने से छुटकारा पा लिया। ईएसआई से पेंशन भी मात्र ढाई सौ रुपये मिलता है।

यह स्थिति महज एक कंपनी की नहीं है। इसलिए नोएडा जैसे औद्योगिक क्षेत्रों में जबतक इलाकाई पैमाने पर मजदूरों का जुझारू क्रान्तिकारी संगठन नहीं बनेगा, तब तक ऐसी अंधेरगर्दियों के खिलाफ मजबूती से आवाज भी नहीं उठाई जा सकती। ●

मुलायम का समाजवाद : पूंजीपतियों का कमाऊ पूत

आते ही 24 चीनी मिलें पूंजीपतियों के हवाले

बिगुल संवाददाता

लखनऊ। उत्तर प्रदेश की चौबीस चीनी मिलों को बेचने का फैसला लिया जा चुका है। यह लोहिया के शिष्य मुलायम सिंह का "समाजवाद" की ओर बढ़ता कदम है। जनता के खून-पसीने से खड़ी हुई चीनी मिलों को औने-पौने दामों मुनाफाखोरों पर बेच देने के फैसले से यह स्पष्ट हो गया है कि उत्तर प्रदेश में आया लोहियावादियों का समाजवाद धनपशुओं का समाजवाद है, आम जनता के सीने पर चढ़कर तो अभी भी वही बूढ़ा घिनौना पूंजीवादी राक्षस खून पी रहा है।

दरअसल, उद्योगपतियों की गिद्ध दृष्टि लंबे समय से उत्तर प्रदेश की चीनी मिलों और इन मिलों के पास बड़ी मात्रा में पड़ी जमीन पर लगी हुई थी। रंग-बिरंगे पूंजीपतियों की बारात के साथ जब मुलायम सिंह ने राजमुकुट पहना था, तभी उद्योगपतियों के चेहरे की चमक यह बता रही थी कि मेहनतकशों पर गाज गिरने वाली है। चुनावबाज नेताओं के हाथों का खिलौना बन चुकीं ट्रेड यूनियनें कुछ भी कहती रही हों, लेकिन चीनी मिल के मजदूरों को यह अहसास था कि उदारीकरण-निजीकरण का दानव उनकी ओर बढ़ चुका है।

राज्य सरकार ने यह फैसला लिया है कि 24 चीनी मिलों को तीस साल की लीज पर दे दिया जायेगा। हकीकत यह है कि इन चौबीस चीनी मिलों में से ग्यारह चीनी मिलें चालू स्थिति में हैं और पांच चीनी मिलें आधुनिकीकरण कर दुरुस्त की जा सकती हैं। यह सभी चीनी मिलें राज्य सरकार द्वारा घोषित मूल्य का भुगतान कर रही हैं। इनके बेच दियें जाने पर किसानों को किस मूल्य से भुगतान होगा, ऐसा कोई भी पैमाना बनाये जाने पर सरकार ने चुप्पी साध रखी है।

चीनी मिलें खरीदने वाले उद्योग-पतियों की मंशा को इसे पहले निजी हाथों में सौंपे गये सार्वजनिक उपक्रमों की हालत से समझा जा सकता है। सार्वजनिक संपत्ति को कौड़ी के मोल खरीदकर उद्योगपतियों ने उन उपक्रमों को लूट-खसोट कर निचोड़ दिया। मजदूरों को नौकरियों से निकाल कर दर-दर की ठोकरें खाने पर मजबूर किया गया। बाल्को का उदाहरण सामने है, जिसे दुबारा बेचने की तैयारी चल रही है, ताकि जो बचा है उसे दूसरा उद्योगपति लूट ले। उत्तर प्रदेश की चीनी मिलों को खरीदने वालों से भी यह उम्मीद करना भोलापन होगा कि वे मजदूरों के हितों की रक्षा करेंगे, किसानों को सही भुगतान करेंगे और चीनी की कीमतों को आसमान नहीं छूने देंगे। ●

मुलायम के नकली समाजवाद और फर्जी धर्मनिरपेक्षता का असली रंग...

(पेज 1 से आगे)

कारोबार के अलावा यही दो क्षेत्र हैं जिनमें सहारा समूह मुनाफा पीट रहा है।

तो यह है मुलायम सिंह यादव के समाजवाद का खाका। तमाम सरकारी उपक्रम अब डंके की चोट पर मुनाफाखोरों के हवाले। कोई पर्देदारी नहीं। उदारीकरण-निजीकरण की गाड़ी अब प्रदेश में अब सरपट दौड़ेगी। सरकार झण्डी दिखाने और पटरी बिछाने का काम ही नहीं कर रही है, उसने संचालन का पूरा जिम्मा ही पूंजीपतियों को सुपुर्द कर दिया है। अब बेलगाम होकर यह गाड़ी मनचाही दिशा में मेहनतकशों को रौंदती-कुचलती आगे बढ़ेगी।

इस मुलायमी समाजवाद में मेहनतकशों को चूं-चपड़ करने की इजाजत नहीं होगी। बिना कोई आवाज उठाये मुनाफाखोरों की तिजोरियों को भरते रहना होगा। अगर आवाज उठाने की हिमाकत की तो लाठियों-गोलियों से शान्त कर दिया जायेगा। अपने एक पुराने कार्यकाल के दौरान मिर्जापुर जिले की डाला और चुर्क सीमेण्ट फैक्टरियां डालमिया को बेचने का विरोध करने वाले मजदूरों पर गोलियां बरसाना कौन भूला होगा। मुजफ्फरनगर के रामपुर तिराहे पर उत्तराखण्ड आन्दोलनकारियों पर हुए अत्याचार मुलायम राज की हिटलरशाही का प्रतीक बन चुका है।

यह तो रहा मुलायम के समाजवाद की अर्थनीति का हाल। उनकी धर्मनिरपेक्षता की राजनीति का असली चेहरा और घिनौनी अवसरवादिता पिछले तीन महीनों में जितनी बेशर्मी से उजागर हुई है उससे इस नंगे राजा को क्या फर्क पड़ेगा? अलबत्ता उनके प्रगतिशील एवं कम्युनिस्ट नामधारी प्रशंसकों एवं मित्रों की फजीहत हो रही है। पिछले 17 अक्टूबर को विहिप के अयोध्या मार्च को लेकर जो नूरांकुश्ती हुई उससे चुनावी राजनीति की दांवघातों की मामूली जानकारी रखने वाला व्यक्ति भी समझ गया कि यह सब 'हिन्दुत्व' के ठेकेदारों और मुसलमानों के इस स्वयंभू मसीहा के बीच चुनावी नफे-नुकसान की बिसात पर खेली जाने वाली गंदी चालें हैं। उधर कांग्रेस के साथ किस तरह का रिश्ता चलाया जाये इस सवाल पर उनकी संसदीय कामरेडों से रिश्तों में थोड़ी खटास पैदा हो गयी है। भाजपा के खिलाफ धर्मनिरपेक्ष ताकतों का मोर्चा बनाने के लिए बुलायी गयी एक मीटिंग में कांग्रेस की पैरवी करने पर मुलायम सिंह यादवने हरकिशन सिंह सुरजीत को यह कहते हुए झिड़क दिया कि सबसे पहले हमें यह तय करना होगा कि धर्मनिरपेक्ष होने का पैमाना क्या है। कांग्रेस के समर्थन से सरकार बनाने वाले मुलायम सिंह यादव की कांग्रेस से यह एलर्जी इस भरोसे के कारण पैदा हुई है कि बसपा की तरह वह कांग्रेस के कुछ विधायकों को भी फोड़ लेंगे।

अपनी सरकार चलाने और अपने चुनावी समीकरण को पुख्ता बना लेने के लिए कुख्यात हिस्ट्रीशीटर विधायक रघुराज प्रताप सिंह उर्फ राजा भैया को जिस तरह एक जननायक का दर्जा दिलवाने में मुलायम सिंह यादव मदद कर रहे हैं वह अवसरवाद ही नहीं बेशर्म दबंगई का भी एक नमूना है। सरकार बनते ही 'राजा भैया' के ऊपर से पोटा हटाने की घोषणा कर दी गयी। कुछ कानूनी अड़चनों की वजह से यह हिस्ट्रीशीटर विधायक अभी जेल से बाहर नहीं आ पाया है लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। जेल में शाही ठाठ से रहते हुए वह छूटने का इंतजार कर रहा है। मंत्रियों-विधायकों से लेकर सरकार के आला अफसरों का दरबार सजा हुआ है। कवि सम्मेलन आयोजित हो रहे हैं। अमरमणि त्रिपाठी की तरफदारी करते हुए भी मुलायम को जरा-सा संकोच नहीं हुआ। उधर नौकरशाही में भी जो सबसे कुख्यात दागी अफसर हैं वे मुलायम के चहेते बने हुए हैं। यानी अपराधियों और भ्रष्टाचारियों को शह देने में मुलायम सिंह यादव ने अपने सभी राजनीतिक बिरादरों को पीछे छोड़ दिया है। मायावती का ताज गलियारा मामला अब बहुत छोटा पड़ता नजर आ रहा है।

इस तरह लोहिया और चरण सिंह का राजनीतिक वारिस उत्तर प्रदेश में 'समाजवाद' को धरती पर उतार रहा है! दरअसल मुलायम सिंह के समाजवादी ढोंग का यह भण्डाफोड़ मुलायम सिंह की असलियत को सामने लाने से अधिक उन किसिम-किसिम के नकली समाजवादी सिद्धान्तों की सच्चाई को मेहनतकशों के सामने उजागर कर रहा है जो पूंजी के समाजीकरण के बिना और उत्पादन के साधनों सहित राजकाज और समाज के समूचे ढांचे पर मजदूर वर्ग के नियंत्रण को कायम किये बिना समाजवाद लाने की शेखी बघारते हैं।

जब तक देश की अर्थव्यवस्था, राजनीतिक ढांचे और समाज के सारे ढांचे पर पूंजीपतियों और समाज के अन्य सम्पत्तिशाली वर्गों का नियंत्रण बना रहेगा तब तक समाजवाद की बातें बघारना मेहनतकशों को बेवकूफ बनाने वाली राजनीतिक चालबाजियों के सिवा कुछ हो ही नहीं सकता। समाजवाद मौजूदा संसदीय व्यवस्था के भीतर चुनाव के रास्ते या जोड़-तोड़ के सहारे सरकारें बनाकर नहीं लाया जा सकता। समाजवाद एक ही रास्ते से आ सकता है-मेहनतकशों के इंकलाब के रास्ते। मेहनतकशों को सबसे पहले क्रान्तिकारी संघर्षों के जरिए पूंजीवादी राज्यसत्ता उखाड़ फेंकना होगा, अपनी राज्यसत्ता कायम करनी होगी। केवल तभी मेहनतकशों के असली समाजवाद की दिशा में बढ़ा जा सकता है। इसलिए चिकनी-चुपड़ी बातें करने वाले हर तरह के नकली समाजवादी फेरीवालों के बहकावे से बाहर आकर मेहनतकशों को इसी दिशा में तैयारियां आगे बढ़ानी होंगी। ●

दंगे-फसाद और क्षेत्रीय झगड़ों की आग में पूरे देश को जलने से बचाओ।

वोट की राजनीति करने वाले, पूंजीपतियों के टट्टू राजनीतिज्ञों की असलियत पहचानो !!

फासिस्ट जुनून में बहने से बचो !!!

पूंजीवादी चुनावी राजनीति के क्रान्तिकारी विकल्प का निर्माण करो !

एक ही रास्ता – पूंजीवाद के नाश का रास्ता !
एक ही रास्ता – नई समाजवादी क्रान्ति का रास्ता !!

उत्तरांचल राज्य-गठन के तीन वर्ष

अमीरजादों की ऐयाशी और जनता की बढ़ती तबाही-बर्बादी

(पेज 1 से आगे)

यहां के संसाधनों को बहुराष्ट्रीय निगमों व बड़े पूंजीपतियों को सौंपने का क्रम लगातार तेज होता जा रहा है। पहाड़ की सारी जल विद्युत परियोजनाएं व उद्यान निजी क्षेत्रों को बेचे जा रहे हैं। विश्व बैंक पोषित संयुक्त वन प्रबंधन (जेएफएम) व स्वजल परियोनाओं के माध्यम से धोखाधड़ी की तरह-तरह की योजनाएं चल रही हैं। उत्तराखंड के जंगलों को साम्राज्यवादी व देशी पूंजीपतियों के उपभोग के लिए सेंचुरी व नेशनल पार्क बनाकर स्थानीय जनता को विस्थापित करने की साजिश रची जा चुकी है। इसके लिए राज्य में 'भारतीय वन अधिनियम 2001' (उत्तरांचल संशोधन) बन भी चुका है।

इन तीन वर्षों में विकास के नाम पर राज्य में शराब की नदियां बह रही हैं, जबकि पहाड़ के तमाम इलाके अंधकार में डूबे हुए हैं। तमाम जगहों पर विद्यालय, अस्पताल और सड़कें तक नहीं और कई जगह हैं भी तो महज कागजों में। फीसों में लगातार बढ़ोत्तरी से आम जनता के बच्चों के लिए पढ़ाई सपना बनता जा रहा है। उच्च शिक्षा तो पूरी तरह से अमीरजादों की बपौती बन चुकी है। यहां शेरवुड, बिड़ला, हिमालयन, इंस्टीट्यूट जैसी निजी शिक्षण संस्थाएं तो पहले ही आम आबादी को मुंह चिढ़ा रही थीं अब प्राइमरी से लेकर इंजीनियरिंग, मेडिकल कालेज के साथ-साथ अन्य शिक्षण संस्थाओं को खोलने का काम तेज हो गया है। इनकी महंगी फीसों के चलते यहां के 70-80 प्रतिशत बच्चे इनमें दाखिला लेने के सपने भी नहीं देख सकते। प्राइवेट नर्सिंग होम की बाढ़ सी आ चुकी है।

नये राज्य में "विकास" की काली आंधी ने समूचे उत्तराखंड के सांस्कृतिक परिवेश को पूंजी की घिनौनी संस्कृति से भर दिया है। राज्य के पर्यटन उद्योग को बढ़ावा देने के नाम पर पांच सितारा होटलों, पब व बार खोलने की इजाजत धड़ल्ले से मिल रही है। फैशन शो आयोजित हो रहे हैं। नैनीताल-मसूरी ही नहीं अब समूचे उत्तरांचल में कई ऐयूयाशी के अड्डे तैयार किये जा रहे हैं, जहां तफरीह के लिए आने वाले नवदौलतिये बेधड़क होकर बाजार की संस्कृति का जहर और अपनी कुंठाओं की गंदगी बिखेर रहे हैं। इन पर्यटन स्थलों के आसपास रहने वाली गरीब आबादी, विशेषकर युवा, इस बेगाने सांस्कृतिक परिवेश में शराब सहित विभिन्न किस्म के दूसरे नशों में खुद को डुबोकर अपने बेगानेपन और निराशा-कुंठा को भुलाने की कोशिश कर रहे हैं। यह भी अनायास नहीं है कि पहाड़ों में नया राज्य बनने के बाद से नशाखोरी, हिंसा, वेश्यावृत्ति, बलात्कार व विभिन्न किस्म के सामाजिक अपराध और बुराइयां तेजी से पांव पसार रही हैं। नया राज्य अमीरजादों की खुली ऐशगाह बना जा रहा है। इसका सीधा रिश्ता पेप्सी-कोक-बर्गर की बाजारू संस्कृति के फैलाव से है।

(अगले अंक में जारी)

मुम्बई के कपड़ा मजदूरों की बदहाली का कड़वा सच

(पेज 3 से आगे)

न तो रोजगार है और न ही छोटी-मोटी खेती से गुजारा आसान रह गया है। कई मजदूरों ने अपनी जमा-पूंजी से गांव जाकर थोड़ी-बहुत जमीन खरीदी लेकिन पूंजीवादी खेती की दौड़ में जल्दी ही या तो उनमें से बहुतों की खेती उजड़ गई या फिर वे किसी महानगर के करोड़ों असंगठित मजदूरों की फौज में जाकर शामिल हो गये। बहुत से मजदूर मुम्बई में ही रुककर सिक्योरिटी गार्ड या ऐसी ही छोटी-मोटी नौकरियां करके जीने की कोशिश कर रहे हैं। कई सर्वेक्षणों से पता चल रहा है कि मुम्बई में तेजी से बढ़ते अपराधों का एक बड़ा कारण बंद होते उद्योग भी हैं।

मजदूरों की बढ़ती बेरोजगारी का एक खतरनाक पहलू यह है कि उनके बीच साम्प्रदायिक ताकतें तेजी से पांव पसार रही हैं। एक ओर बेरोजगारी और दूसरी ओर मजदूर आंदोलन के बिखराव से उपजी गहरी निराशा और कुंठा का फायदा उठाकर संघी संगठन और शिवसेना मजदूरों के दिमाग में जहर घोल रहे हैं और उनके बीच से अपने कार्यकर्ता भरती कर रहे हैं। जर्मनी में हिटलर के संगठनों ने भी ऐसे ही मजदूरों की हताशा का फायदा उठाया था। इसका सबसे ज्वलंत उदाहरण मजदूरों का गुजरात नरसंहार में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेना है। एक अध्ययन के मुताबिक गुजरात में कत्लेआम और लूटपाट को अंजाम देने वाली भीड़ में वे बेरोजगार मजदूर भी थे वहां बंद हुई मिलों, खासकर सूरत और अहमदाबाद की बंद हुई कपड़ा मिलों से उजड़े थे।

कारखानों और मिलों को बीमार घोषित करने वाला औद्योगिक एवं वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (बीआईएफआर) मिलमालिकों के हित में फैसला देकर सरकार, बैंक, तथा अन्य वित्तीय संगठन को चूना लगाने का काम करता है। यह भी टैक्सों के जरिए जनता से उगाहे गये पैसे को धन्नासेठों की झोली में डालने का ही एक उपाय है। मिलों की जमीन बेचने का काम भी बोर्ड करता है।

काम से बेदखल हुए मजदूरों की ताकत कम हुई है क्योंकि वे बिखर चुके हैं। कानूनी लड़ाइयों के अलावा उन्हें और कोई रास्ता नहीं दिख रहा है, लेकिन कानूनी लड़ाई हमेशा लम्बी ही खिंचती है, और यह बात भी छिपी नहीं है कि कानून हमेशा पूंजीपतियों का हितैषी होता है। इसलिए फैसले पहले से ही निश्चित है।

किसी के लिए यह हैरत की बात हो सकती है कि एक समय में देश के सबसे मजबूत ट्रेड यूनियन आंदोलन की जमीन मुंबई में मजदूर आज इतने लाचार कैसे हो गये? ठीक यही स्थिति कानपुर की भी है। इसके कई कारण हैं लेकिन एक बहुत बड़ी वजह यह है कि ट्रेड यूनियन आंदोलन अर्थवाद के गड्ढे से बाहर कभी निकला ही नहीं। मजदूरों को वेतन-भत्ते की लड़ाई से आगे कभी सोचने ही नहीं दिया गया, उनके बीच राजनीतिक शिक्षण-प्रशिक्षण का काम शून्य हो गया। अपनी क्रान्तिकारी विचारधारा और संस्कृति से मजदूरों को लैस करने का काम दशकों पहले ही छोड़ दिया गया। इसी का नतीजा था कि मुम्बई के ट्रेड यूनियन आंदोलन पर पहले दत्ता सामंत जैसे विशुद्ध अर्थवादी का कब्जा हुआ जिसने जुझारू मजदूर आंदोलन का इस्तेमाल सत्ता की दलाली के लिए किया, और फिर साम्प्रदायिक तथा लम्पट शक्तियां उनके बीच घुसपैठ करने में कामयाब हो गईं।

आज यह एक कड़वी सच्चाई है कि मुम्बई या कानपुर जैसे शहरों का ट्रेड यूनियन आंदोलन पुराने आधार पर अब कभी खड़ा नहीं हो सकता। देश भर में मजदूर आंदोलन को अब नये सिरे से, क्रान्तिकारी ढंग से, बोल्शेविक उसूलों पर खड़ा करना होगा। नये क्रान्तिकारी मजदूर संगठन खड़े करने होंगे और मजदूर वर्ग की नई क्रान्तिकारी पार्टी का निर्माण करना होगा। यह रास्ता लम्बा है, कठिन है पर यही अकेला रास्ता है-कोई भी शार्टकट निराशा के नये गड्ढे की ओर ही ले जायेगा।

● अभिषेक

एक ओर हैं-
रक्तपिपासु धार्मिक कट्टरपंथी और लाशों की आंच पर रोटियां सेंकते वोटों के व्यापारी,
दूसरी ओर है-
दबी-कुचली, गरीब मेहनतकश आम आबादी।
तय करो किस ओर हो तुम !

विशेष सामग्री

(बत्तीसवीं किस्त)

पार्टी की बुनियादी समझदारी

अध्याय -11

पार्टी के प्राथमिक संगठनों के काम

एक क्रान्तिकारी पार्टी के बिना मजदूर वर्ग क्रान्ति को कतई अंजाम नहीं दे सकता। लेनिन ने इस बात को बार-बार जोर देकर कहा था। स्तालिन और माओ ने भी बराबर इस बात पर जोर दिया और बीसवीं सदी की सभी सफल सर्वहारा क्रान्तियों ने भी इसे सच साबित किया।

लेनिन ने सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी के सांगठनिक उसूलों का निर्धारण किया और इसी फौलादी सांचे में बोल्शेविक पार्टी को ढाला। चीन की पार्टी भी बोल्शेविक पार्टी की ही उत्तराधिकारी थी। सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान, समाजवादी समाज में वर्ग-संघर्ष का संचालन करते हुए माओ के नेतृत्व में चीन की पार्टी ने अन्य युगान्तरकारी सैद्धान्तिक उपलब्धियों के साथ-साथ लेनिनवादी सांगठनिक सिद्धान्तों को भी और आगे विकसित किया।

सोवियत संघ और चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के लिए बुर्जुआ तत्वों ने सबसे पहले यही जरूरी समझा कि सर्वहारा वर्ग की पार्टी का चरित्र बदल दिया जाये। हमारे देश में भी क्रान्ति का रास्ता छोड़ संसदीय रास्ते पर चलने वाली नामधारी कम्युनिस्ट पार्टियां मौजूद हैं। भारतीय मजदूर क्रान्ति को सफल बनाने के लिए भारत में भी सर्वहारा वर्ग की एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी खड़ी करने का काम सबसे ऊपर है।

इसके लिए बेहद जरूरी है कि मजदूर वर्ग यह जाने कि असली और नकली कम्युनिस्ट पार्टी में क्या फर्क होता है और एक क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी कैसे खड़ी की जानी चाहिए।

इसी उद्देश्य से, फरवरी 2001 के अंक से हमने एक बेहद जरूरी किताब 'पार्टी की बुनियादी समझदारी' के अध्यायों का किस्तों में प्रकाशन शुरू किया है। यह किताब सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पार्टी-कतारों और युवा पीढ़ी को शिक्षित करने के लिए तैयार की गई श्रृंखला की एक कड़ी थी। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की दसवीं कांग्रेस (1973) में पार्टी के गतिशील क्रान्तिकारी चरित्र को बनाये रखने के प्रश्न पर अहम सैद्धान्तिक चर्चा हुई थी, पार्टी का नया संविधान पारित किया गया था और संविधान पर एक महत्वपूर्ण रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी। इसी नई रोशनी में यह पुस्तक एक सम्पादकमण्डल द्वारा तैयार की गई थी। मार्च, 1974 में पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, शंघाई से इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की 4,75,000 प्रतियां छपीं। यह पुस्तक पहले चीनी भाषा से फ्रांसीसी भाषा में अनूदित हुई और 1976 में प्रकाशित हुई। फिर नार्मन बेथ्यून इंस्टीट्यूट, टोरण्टो (कनाडा) ने इसका फ्रांसीसी से अंग्रेजी में अनुवाद कराया और 1976 में ही इसे प्रकाशित कर दिया। प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद मूल पुस्तक के इसी अंग्रेजी संस्करण से किया गया है।

-सम्पादक

पार्टी का संविधान पार्टी के प्राथमिक संगठनों के पांच मुख्य काम रेखांकित करता है, जो इन संगठनों को विकसित और मजबूत करने और उन्हें लड़ाकू टुकड़ी के रूप में अपनी पूरी भूमिका निभाने, और अध्यक्ष माओ की क्रांतिकारी लाइन को लागू करने, पार्टी के नतृत्व को मजबूत बनाने और सर्वहारा वर्ग की तानाशाही को सुदृढ़ बनाने के लिए बेहद महत्वपूर्ण हैं।

पार्टी के प्राथमिक संगठनों का विकास और सुदृढ़ीकरण बेहद महत्वपूर्ण है

पार्टी के प्राथमिक संगठनों के विकास और सुदृढ़ीकरण की ज़रूरत हमारी पार्टी के स्वभाव से ही निर्धारित हो जाती है। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक पार्टी है, सर्वहारा वर्ग का अगुआ दस्ता है, और संगठन का उच्चतम रूप है; यह समूची चीनी जनता के नेतृत्व का कोर है। पार्टी का नेतृत्व प्राथमिक संगठनों के जरिए काम करता है, जो अध्यक्ष माओ की राजनीतिक लाइन और सिद्धांतों को लागू करने में सामान्य पार्टी सदस्यों और क्रांतिकारी जनता की अगुआई करते हैं। पार्टी के प्राथमिक संगठन वे ढांचे हैं, जिनके जरिए पार्टी की लाइन, दिशा, नीतियां और पार्टी द्वारा बताए गए विभिन्न संघर्षात्मक कामों को अंजाम दिया जाता है; वे वर्ग शत्रु के विरुद्ध संघर्ष में पार्टी सदस्यों और क्रांतिकारी जनसमुदायों का मार्गदर्शन करने वाले क्रांति के गढ़ होते हैं। केवल पार्टी के प्राथमिक संगठनों को विकसित और मजबूत बनाकर ही पार्टी नेतृत्व को हर मोर्चे पर मजबूत बनाया जा सकता है, और पार्टी सर्वहारा वर्ग के अगुआ दस्ते के रूप में अपने चरित्र को कायम रख सकती है। हमारी पार्टी का सांगठनिक सिद्धांत पार्टी के प्राथमिक संगठनों के विकास और सुदृढ़ीकरण की मांग करता है। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी जनवादी केंद्रीयता के सिद्धांत पर आधारित एक दृढ़ संगठन है। केंद्रीय कमेटी से लेकर स्थानीय संगठनों तक, स्थानीय संगठनों से लेकर प्राथमिक संगठनों तक, यह एक समेकित निकाय है। प्राथमिक संगठन पार्टी की सांगठनिक बुनियाद का निर्माण करते हैं। अगर पार्टी वैचारिक, राजनीतिक और सांगठनिक रूप से ऐक्यबद्ध नहीं होती, तो यह एक असंगठित समूह बन जाती और वर्ग संघर्ष और दो लाइनों के संघर्ष की कठिन परीक्षाओं का सामना करने में अक्षम हो जाती; इसकी जुझारू क्षमता कमजोर हो जाती और हर कारखाने, आस-पड़ोस, संगठन और स्कूल में सर्वहारा वर्ग की तानाशाही को सुदृढ़ करने का काम पूरा करना नामुमकिन हो जाता।

पार्टी का ऐतिहासिक लक्ष्य पार्टी के प्राथमिक संगठनों के विकास और सुदृढ़ीकरण की मांग करता है। अगर हमारी पार्टी को मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की व्यवस्था का खात्मा करने में कामयाब होना है और दुनिया भर में कम्युनिज्म के लक्ष्य की प्राप्ति में सहायता करनी है, तो पार्टी के प्राथमिक संगठनों को विकसित और मज़बूत करना, पूरे पार्टी सदस्यों और क्रांतिकारी जनसमुदायों को गोलबंद और एक विशाल क्रांतिकारी सेना को संगठित करना जरूरी है, जो पार्टी के ऐतिहासिक लक्ष्य को पूरा करने के लिए एक वेगवान धारा की तरह आगे बढ़ेगी। पार्टी के प्राथमिक संगठन वे सेतु हैं, जिनके जरिए पार्टी के नेतृत्वकारी निकाय जनसमुदायों के साथ निकट संबंध कायम रखते हैं। ये वो गढ़ हैं जो लाखों-लाख की संख्या में हमारी जनता का संघर्ष और निर्माण में मार्गदर्शन करते हैं। केवल पार्टी के प्राथमिक संगठनों का विकास और सुदृढ़ीकरण ही हमें कम्युनिज्म और समूची मानव जाति की मुक्ति लाने के निर्णयात्मक संघर्ष में उतर पड़ने के काबिल बनाता है।

पार्टी के प्राथमिक संगठनों का विकास और सुदृढ़ीकरण एक बेहद अहम सवाल है जिस पर अध्यक्ष माओ ने हमेशा ही करीबी से गौर किया है। हमारी पार्टी की स्थापना से ही, उन्होंने प्राथमिक इकाइयों में पार्टी संगठनों को खड़ा करने के काम में व्यक्तिगत रूप से भाग लिया। पार्टी निर्माण पर अवसरवादियों के गलत विचारों की उन्होंने दृढ़ता से आलोचना की और पार्टी के प्राथमिक संगठनों को विकसित और सुदृढ़ बनाने के लिए लाइनों, दिशाओं और नीतियों की एक श्रृंखला को सूत्रबद्ध किया। अध्यक्ष माओ ने पार्टी के सदस्यों की भर्ती में भी खुद हिस्सा लिया और अन्युआन कोयला खदान के मजदूरों के बीच पार्टी शाखाओं को स्थापित किया। उन्होंने चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की शाओशान शाखा जैसे ग्रामीण इलाके में पार्टी के प्राथमिक संगठनों को स्थापित किया और लाल सेना की कंपनियों और स्क्वाड्रन में पार्टी शाखाओं को गठित करने के काम को भी स्वयं निर्देशित किया। चिंगकांग पहाड़ियों में संघर्ष के दौरान उन्होंने बतायाः **"'पार्टी शाखा कम्पनी आधार पर संगठित होती है'; यही वजह है कि लाल सेना इतने दुष्कर संघर्ष में बिना बिखरे लड़ने में कामयाब रही है।" (माओ त्से-तुङ, संकलित रचनाएं,** खंड 1, "चिंगकांग पहाड़ियों में संघर्ष", पृष्ठ-84, अंग्रेजी संस्करण) उन्होंने लाल सेना की कंपनियों में पार्टी शाखाओं की स्थापना की उपेक्षा या विरोध करने की गलत प्रवृत्तियों की आलोचना की, और पार्टी के प्राथमिक संगठनों को दृढ़ता से स्थापित करने के भारी महत्व को दर्शाया। पूरी नई जनवादी क्रांति के दौरान, अध्यक्ष माओ ने दुश्मन को हराने के तीन जादुई हथियारों में से पार्टी निर्माण को हमेशा सबसे महत्वपूर्ण माना। पूरे देश की मुक्ति के बाद अध्यक्ष माओ ने फिर बार-बार पार्टी के प्राथमिक संगठनों के विकास और सुदृढ़ीकरण के सवाल पर महत्वपूर्ण निर्देश जारी किए। महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के दौरान भी उन्होंने जोरदार ढंग से ऐलान कियाः **"हर पार्टी-शाखा को जनसमुदायों बीच अपने आपको फिर मजबूत बनाना चाहिए। यह काम जनसमुदायों की भागीदारी के साथ होना चाहिए, सिर्फ कुछ पार्टी सदस्यों की भागीदारी के साथ नहीं; यह जरूरी है कि पार्टी के बाहर के जनसमुदाय बैठकों में हिस्सा लें और टिप्पणियां दें।"** अध्यक्ष माओ के महत्वपूर्ण निर्देशों ने स्पष्ट तौर पर पार्टी के प्राथमिक संगठनों के निर्माण और उन्हें एक उन्नत सर्वहारा चरित्र देने के लिए बुनियादी राजनीतिक दिशा को दिखला दिया है।

हमारी पार्टी के समूचे इतिहास के दौरान, प्राथमिक संगठन बनाने के सवाल पर दो लाइनों का संघर्ष हमेशा बेहद तीखा रहा है। लाल सेना की स्थापना के वक्त, पार्टी के भीतर के अवसरवादियों ने कंपनियों में पार्टी-शाखाओं की स्थापना का विरोध किया; उन्होंने काफी खुले तौर पर लाल सेना की कंपनियों में पार्टी प्रतिनिधियों की व्यवस्था को समाप्त करने की वकालत की ताकि मजदूरों और किसानों की लाल सेना को पार्टी नेतृत्व से दूर किया जा सके। समाजवादी क्रांति के दौर में ल्यू शाओ-ची, लिन पियाओ और उनके जैसे दूसरे धूर्तों ने पूरी ताकत के साथ पार्टी निर्माण से संबंधित अध्यक्ष माओ की सर्वहारा लाइन का विरोध किया। पार्टी कमेटियों की व्यवस्था के बदले "एक नेता की व्यवस्था" के लिए वे पार्टी नेतृत्व के खिलाफ लड़े, ताकि पार्टी को बंदूक निर्देशित करे, इस नाकाम उम्मीद में कि वे पार्टी के प्राथमिक संगठनों को सर्वहारा वर्ग की तानाशाही का विरोध करने, सर्वहारा क्रांति के खिलाफ तोड़-फोड़ करने और पूंजीवाद की पुनर्स्थपना करने के अपने औजारों में बदल सकें।

ये तथ्य साफ तौर पर दिखला देते हैं कि पार्टी के प्राथमिक संगठनों को विकसित और मजबूत बनाना या न बनाना पार्टी निर्माण पर दो लाइनों के संघर्ष का एक अहम पहलू है या नहीं, कि यह पार्टी के नेतृत्व को ऊंचा उठाने या न उठाने और पार्टी को सर्वहारा के हरावल का चरित्र देते हुए उसका निर्माण करने या न करने से जुड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न है। पार्टी के प्राथमिक संगठनों को दृढ़ता के साथ पार्टी निर्माण पर अध्यक्ष माओ की लाइन को लागू करना चाहिए, ल्यू शाओ-ची, लिन प्याओ एंड कंपनी के अपराधों की, जिन्होंने पार्टी के प्राथमिक संगठनों के निर्माण के काम को नुकसान पहुंचाया, आलोचना करनी चाहिए, सर्वहारा के हरावल का चरित्र देते हुए प्राथमिक संगठनों का निर्माण जारी रखना चाहिए और उन्हें पार्टी के प्राथमिक संगठनों के निर्माण को पहले दर्जे का जुझारू काम समझना चाहिए।

(जारी)

अगले अंक में- **'पार्टी के प्राथमिक संगठनों के जुझारू काम'**

राहुल फाउण्डेशन का नया प्रकाशन

बोल्शेविक पार्टी का इतिहास

जे.वी. स्तालिन द्वारा लिखित और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की केन्द्रीय समिति के एक आयोग द्वारा सम्पादित यह पुस्तक सोवियत संघ में 1938 में छपी थी। यह पुस्तक दुनियाभर के कम्युनिस्टों के लिए एक अनिवार्य पाठ्यपुस्तक रही है, और आगे भी रहेगी। यह पुस्तक कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में मजदूर वर्ग द्वारा समाजवाद के लिए सफल संघर्ष और समाजवादी निर्माण के अनुभवों और सबकों का निचोड़ प्रस्तुत करती है। यह पुस्तक हमें सामाजिक विकास के नियमों के ज्ञान से लैस करती है तथा पूँजी और श्रम के बीच जारी विश्व ऐतिहासिक महासमर में समाजवाद की अपरिहार्य विजय में विश्वास पैदा करती है। निम्न-पूंजीवादी पार्टियों-गुटों, सभी प्रकार के अवसरवादियों, आत्मसमर्पणवादियों, जनता के दुश्मनों और पार्टी के भीतर वामपंथी दुस्साहसवाद तथा दक्षिणपंथी अवसरवाद की प्रवृत्तियों के खिलाफ समझौताहीन संघर्ष चलाते हुए तपकर निखरी बोल्शेविक पार्टी का यह इतिहास हर देश के क्रान्तिकारियों के लिए एक प्रकाशस्तम्भ है।

पृ. 360 मूल्य : 80 रुपये

प्रतियों के लिए जनचेतना के केन्द्रों से संपर्क करें

(पते के लिए देखें पृष्ठ 2 पर नीचे)

महान अक्टूबर क्रान्ति (7 नवम्बर) की वर्षगांठ के अवसर पर

बोल्शेविकों की सफलता की बुनियादी शर्त

● वी.आई. लेनिन

1917 में हुई महान सोवियत समाजवादी क्रान्ति मानवता के इतिहास में एक नये युग के आगमन की घोषणा थी। दुनिया के छठे भाग में मेहनतकश अवाम ने महान बोल्शेविक पार्टी के नेतृत्व में कुर्बानियों की मिसाल कायम करते हुए बर्बर पूंजीवादी शोषकों-उत्पीड़िकों की सत्ता को उखाड़ फेंका और अपनी किस्मत की बागडोर अपने हाथों में ले ली। क्रान्ति के तुरन्त बाद के तीन वर्षों में चौदह साम्राज्यवादी देशों के एकजुट हमले, अपने "खोये हुए स्वर्ग" को फिर से हासिल करने के लिए देश की भीतरी प्रतिक्रियावादी ताकतों के हमलों, दूसरे विश्वयुद्ध (1939-'45) के दौरान हिटलर की फौजों के खिलाफ महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध और समूचे समाजवादी निर्माण काल के संघर्षों में सोवियत जनता को जो कामयाबियां मिलीं उनका सबसे अहम कारण था बोल्शेविक पार्टी की अगुवाई। इस पहली सफल सर्वहारा क्रान्ति के महान नेता व्लादिमीर इल्यीच लेनिन ने बोल्शेविक पार्टी को सफलता की बुनियादी शर्त बताया था। यह बोल्शेविक पार्टी कैसी थी, किस फौलादी सांचे में ढली हुई थी, उसकी ताकत का असली स्रोत क्या था, यह जानना मेहनतकशों के लिए बेहद जरूरी है। खासकर हमारे देश में सर्वहारा क्रान्ति आज भी जिस मुकाम पर खड़ी है, जहां मजदूर वर्ग की एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी बनाने का काम अभी भी अहम बना हुआ है, बोल्शेविकों की सफलता की इस बुनियादी शर्त के बारे में गहरी समझ बनाना और उस पर अमल करना बेहद जरूरी है। इसी के मद्देनजर हम लेनिन की प्रसिद्ध रचना 'वामपंथी' कम्युनिज्म : एक बचकाना मर्ज से एक छोटा लेकिन महत्वपूर्ण अंश 'बिगुल' के पाठकों के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं। -सम्पादक

"शायद अब लगभग हर आदमी यह बात देखता है कि यदि हमारी पार्टी में बहुत सख्त, सही मानी में लौह अनुशासन न होता और यदि पूरे का पूरा मजदूर वर्ग, अर्थात उसके सभी विचारशील, ईमानदार, आत्मत्यागी, प्रभावशाली और पिछड़े हुए हिस्सों को साथ ले चलने या उनका नेतृत्व करने में समर्थ अंशक पार्टी का पूर्ण एवं निःस्वार्थ भाव से समर्थन न करते, तो बोल्शेविकों के हाथ में सत्ता ढाई साल तो क्या, ढाई महीने भी न रह पाती।

सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व एक अत्यन्त निःस्वार्थ और निर्मम युद्ध है, जो एक नया वर्ग अपने से **अधिक शक्तिशाली** शत्रु, बुर्जुआ वर्ग के खिलाफ चलाता है, जिसकी पराजय से (भले ही वह केवल एक देश में पराजित हुआ हो) उसका प्रतिरोध दस गुना बढ़ जाता है और जिसकी शक्ति न केवल अंतर्राष्ट्रीय पूंजी की शक्ति में, बुर्जुआ वर्ग के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की ताकत और मजबूती में, बल्कि आदत की ताकत में, छोटे पैमाने के उत्पादन की शक्ति में भी निहित है। कारण कि दुर्भाग्य से, छोटे पैमाने का उत्पादन लगातार, हर दिन, हर घंटे, अपने-आप और बड़े पैमाने पर पूंजीवाद और बुर्जुआ वर्ग को पैदा करता रहता है। इन सभी कारणों से सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व अत्यन्त आवश्यक है और एक लम्बा, कठोर और निर्मम युद्ध चलाये बिना, जीवन और मरण की लड़ाई लड़े बिना, एक ऐसी लड़ाई लड़े बिना, जिसमें धैर्य, अनुशासन, दृढ़ता, अदम्य साहस और इच्छा की एकता आवश्यक होती है, बुर्जुआ वर्ग पर विजय पाना असम्भव है।

मैं फिर दुहरा दूं, रूस में सर्वहारा वर्ग के सफल अधिनायकत्व के अनुभव ने उन लोगों के सामने, जिनमें सोचने का सामर्थ्य नहीं है, या जिन्हें इस प्रश्न पर विचार करने का अवसर नहीं प्राप्त हुआ है, यह बात बिल्कुल साफ कर दी है कि सर्वहारा वर्ग का पूर्ण केन्द्रीयकरण और कठोरतम अनुशासन बुर्जुआ वर्ग पर विजय पाने के लिए एक बुनियादी शर्त है।

इस विषय की चर्चा तो अकसर होती है। परन्तु इस बात पर पर्याप्त विचार नहीं किया जाता कि इस बात का अर्थ क्या है और किन परिस्थितियों में यह संभव है? क्या यह बेहतर नहीं होता कि सोवियत सत्ता तथा बोल्शेविकों को संबोधित अभिवादनों में इस बात का अधिक बार गंभीरतम विश्लेषण भी होता कि क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग को जिस अनुशासन की आवश्यकता है, उसे गढ़ने में बोल्शेविक किन कारणों से सफल हुए?

एक राजनीतिक चिंतनधारा और एक राजनीतिक पार्टी के रूप में बोल्शेविज्म 1903 से मौजूद है। बोल्शेविज्म के अस्तित्व की इस सारी मुद्दत के दौरान उसके इतिहास पर विचार करने से ही हमें अच्छी तरह मालूम हो सकता है कि कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी बोल्शेविज्म कैसे उस लौह अनुशासन को पैदा कर और कायम रख सका, जिसकी सर्वहारा वर्ग की विजय के लिए आवश्यकता थी।

सबसे पहले तो यह सवाल उठता है : सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी में अनुशासन कैसे कायम रखा जाता है? उसे परखा कैसे जाता है? उसे सुदृढ़ कैसे बनाया जाता है? सबसे पहले सर्वहारा वर्ग के हरावल दस्ते की चेतना से, क्रान्ति के प्रति उसकी निष्ठा से, उसके धैर्य से, आत्मबलिदान और शौर्य से। दूसरे, मेहनतकश जनता के विशाल समुदायों, मुख्यतः सर्वहारा समुदायों के साथ, परन्तु साथ ही गैर सर्वहारा मेहनतकश जनता के साथ भी अपना सम्बन्ध स्थापित करने की, उसके निकट आने की और निश्चित हद तक, अगर आप पसन्द करें, उसके साथ घुल-मिल जाने की क्षमता से। तीसरे, इस बात से कि यह हरावल दस्ता कितना सही राजनीतिक नेतृत्व कर रहा है, उसकी राजनीतिक रणनीति और कार्यनीति कितनी सही है, बशर्ते अधिक से अधिक व्यापक जनसमुदाय स्वयं अपने अनुभव से इस बात के कायल हों कि यह नेतृत्व, रणनीति और कार्यनीति सही है। बिना इन शर्तों के उस क्रान्तिकारी पार्टी में अनुशासन मूर्त रूप ग्रहण नहीं कर सकता, जो सही मानी में प्रगतिशील वर्ग की पार्टी बनने के योग्य है, जिसका उद्देश्य बुर्जुआ वर्ग का तख्ता उलटना और पूरे समाज का कायापलट करना है। इन शर्तों के बिना अनुशासन कायम करने के प्रयत्न लाजिमी तौर से बेकार साबित होते हैं और कोरी लफ्फाजी और नाटकीयता बनकर रह जाते हैं। दूसरी ओर, ये सभी परिस्थितियां एकबारगी पैदा नहीं हो सकतीं। दीर्घकालीन मेहनत और कठिनाई से हासिल किये गये अनुभव की मदद से ही ये परिस्थितियां तैयार की जाती हैं। सही क्रान्तिकारी सिद्धान्त पत्थर की लीक नहीं होता, वह तो सच्चे जन-आंदोलन और सच्चे क्रान्तिकारी आंदोलन के व्यावहारिक कार्य के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध कायम होने से ही अंतिम रूप धारण करता है।**"**

उस तूफानी रात में...

● जॉन रीड

जॉन रीड एक अमेरिकी पत्रकार और लेखक थे, जो अक्टूबर क्रान्ति के दिनों में रूस में मौजूद थे। उनके द्वारा अक्टूबर क्रान्ति का आंखों देखा विवरण 'दस दिन जब दुनिया हिल उठी' नाम से 1919 में प्रकाशित हुआ। यहां हम उस पुस्तक का वह अंश प्रकाशित कर रहे हैं, जिसमें सोवियतों के उस द्वितीय अखिल रूसी कांग्रेस के उस तूफानी अधिवेशन की चर्चा की गई है जो शीत प्रासाद पर बोल्शेविकों के कब्जे के ठीक बाद, स्मोल्नी की इमारत में 8 नवम्बर 1917 को शुरू हुई थी। -सम्पादक

दस दिन जब दुनिया हिल उठी
(एक अंश)

...8 बजकर ठीक 40 मिनट हुए थे जब तालियों की जबर्दस्त गड़गड़ाहट से पता चला कि सभापति-मंडल के सदस्यों ने प्रवेश किया। उनमें लेनिन-महान लेनिन भी थे। नाटा कद, गठा हुआ शरीर, कन्धों के ऊपर एक बड़ा-सा सिर गंजा और आगे की तरफ उभरा हुआ दृढ़ता से जमा था। छोटी-छोटी आंखें, चिपटी-सी नाक, चौड़ा अच्छा खासा मुंह और भारी ठुड्डी, दाढ़ी इस समय सफाचट थी, किन्तु पहले के और बाद के वर्षों की उनकी प्रसिद्ध दाढ़ी के बाल उगने लगे थे। वे पुराने कपड़े पहने हुए थे, जिनमें पतलून उनके कद को देखते हुए खासी लम्बी थी। चेहरे-मोहरे से वह ऐसे नहीं थे कि जनता के आराध्य बन सकें, फिर भी उन्हें जितना प्रेम और सम्मान मिला उतना इतिहास में विरले ही नेताओं को मिला होगा। वे एक विलक्षण जन नेता थे - जो केवल अपनी बुद्धि के बल नेता बने थे। उनकी तबियत में न रंगीनी थी, न लताफत, और न कोई ऐसी स्वभावगत विलक्षणता ही थी जो मन को आकर्षित करती। वह दृढ़, अविचल तथा अनासक्त आदमी थे, परन्तु गहन विचारों को सीधे-सादे शब्दों में समझाने और किसी भी ठोस परिस्थिति का विश्लेषण करने की उनमें अपूर्व क्षमता थी। और, सूक्ष्म-दर्शिता के साथ-साथ, उनमें जबर्दस्त बौद्धिक साहसिकता भी भरी हुई थी।

अब लेनिन बोलने के लिए खड़े हुए। सामने के पढ़ने के स्टैण्ड को पकड़े, वह अपनी छोटी-छोटी मिचमिचाती आंखों से भीड़ को एक सिरे से दूसरे सिरे तक देख रहे थे। मिनटों तक तालियों की गड़गड़ाहट होती रही लेकिन, वह जैसे उससे बेखबर, लोगों के खामोश होने का इंतजार करते खड़े रहे। जब तालियां बंद हुईं, तो निहायत सादगी से उन्होंने कहा, **"अब हम समाजवादी व्यवस्था का निर्माण शुरू करेंगे!"** और फिर जन-समुद्र का वही प्रचंड गर्जन आरंभ हो गया।

"पहला काम है शान्ति की स्थापना के लिए अमली कदम उठाने का; सोवियत की इन शर्तों के आधार पर कि-- किन्हीं देशों को हड़पा नहीं जायेगा, किसी से कोई हर्जाना नहीं वसूल किया जायेगा और क़ौमों को आत्म-निर्णय का अधिकार दिया जायेगा-- हम सभी युद्धरत देशों की जनता के सामने शान्ति का प्रस्ताव रखेंगे। साथ ही, अपने वादे के अनुसार, हम गुप्त संधियों को प्रकाशित कर देंगे और उन्हें खारिज कर देंगे-- युद्ध और शांति का प्रश्न इतना स्पष्ट है कि, मैं समझता हूं कि, बिना किसी भूमिका के ही सभी युद्धरत देशों के जनगण के नाम घोषणा के मसौदे को मैं आपके सामने पढ़ कर सुना दे सकता हूं।"

जब वे बोल रहे थे उनका बड़ा मुंह खुला हुआ था और उस पर जैसे हंसी खेल रही थी। उनकी आवाज भारी थी, किन्तु सुनने में अप्रिय नहीं लगती थी-- लगता था कि वर्षों तक इसी तरह बोलते रहने में वह इस तरह सख्त हो गयी थी। वह एक ही लहजे में बोलते रहे। सुनने वाले को महसूस होता था कि वह इसी तरह हमेशा-हमेशा तक बोलते रह सकते थे। अपनी बात पर जोर देना होता तो बस जरा-सा आगे की ओर वे झुक जाते, न कोई अंगविक्षेप, न भावभंगी। और उनके सामने हजारों सीधे-सादे लोगों के एकाग्र मुखड़े थे जो भक्ति-भाव से उनकी ओर उठे हुए थे।

समस्त युद्धरत राष्ट्रों के जनगण तथा सरकारों के नाम घोषणा

"6 तथा 7 नवम्बर की क्रान्ति द्वारा स्थापित तथा मजदूरों, सैनिकों और किसानों के प्रतिनिधियों की सोवियतों पर आधारित, मजदूरों और किसानों की यह सरकार समस्त युद्धरत जनगण तथा उनकी सरकारों से प्रस्ताव करती है कि एक न्यायपूर्ण तथा जनवादी शान्ति संधि के लिए वे तत्काल वार्ता आरंभ करें।"

"न्यायपूर्ण तथा जनवादी शांति से -जिसके लिए युद्ध से थके-मांदे और दुर्बल हो गये सभी युद्धरत देशों के मजदूरों एवं मेहनतकश वर्गों का बहुमत लालायित है, और जिसकी जारशाही राजतंत्र को धराशायी करने के बाद से रूस के मजदूर और किसान स्पष्ट रूप से लगातार मांग करते आये हैं-सरकार का मतलब ऐसी तात्कालिक शांति से है जिसमें दूसरे देशों को हड़पा नहीं जायेगा अर्थात्, जिसमें दूसरे देशों के प्रदेशों को अधीन नहीं बनाया जायेगा, दूसरी कौमों (राष्ट्रीयताओं) को बलात् हड़पा नहीं जायेगा और जिसमें किसी प्रकार के हर्जाने नहीं वसूल किये जायेंगे।"

"रूस की सरकार समस्त युद्धरत देशों के जनगण से प्रस्ताव करती है कि, ऐसी शांति के स्थापनार्थ बातचीत संबंधी निर्णायक कदम उठाने के लिए, तुरंत, तनिक-सा भी विलम्ब किये बिना, और तमाम देशों और जातियों की अधिकृत जन-प्रतिनिधि सभाओं द्वारा इस प्रकार की शांति की सभी शर्तों की निश्चित पुष्टि की जाने से पहले ही, वे अपनी रजामंदी जाहिर करें और ऐसी शांति सन्धि पर हस्ताक्षर करें..."

ठीक 10 बजकर 35 मिनट पर कामेनेव ने कहा कि जो लोग "घोषणा" के पक्ष में हों वे अपने कार्ड दिखलायें। केवल एक प्रतिनिधि ने विरोध में अपना हाथ उठाने की जुर्रत की, किन्तु उसके चारों ओर लोगों में यकायक जो उत्साह भड़क उठा उसकी वजह से उसने भी अपना हाथ जल्दी से नीचे कर लिया। "घोषणा" सर्वसम्मति से स्वीकृत हो गयी।

सहसा, हमने देखा कि जैसे एक ही सहज प्रेरणा से अनुप्राणित होकर, हम सब उठ खड़े हुए हैं और हमारे कंठों से **"इण्टरनेशनल"** (मजदूरों के अन्तरराष्ट्रीय गीत) का मुक्त, आरोही स्वर फूट निकला है। एक पुराना, खिचड़ी बालोंवाला सिपाही बच्चे की तरह फूट-फूट कर रो पड़ा। अलेक्सान्द्रा कोल्लोन्ताई ने जल्दी से अपने आंसुओं को किसी तरह रोक लिया। गीत के प्रबल स्वर सभा-भवन में गूंजते हुए, खिड़कियों और दरवाजों से बाहर निकल गये और उठ कर निस्तब्ध आकाश में व्याप्त हो गये।

●

अमेरिकी कब्जे के खिलाफ उग्र होता इराकी जनता का प्रतिरोध

इराक में सद्दाम हुसैन की सत्ता के पतन और उसकी संगठित सेना के छिन्न-भिन्न हो जाने के बाद वहां कब्जा जमायी अमेरिकी फौजों के खिलाफ मोर्चा अब आम जनता ने संभाल लिया है। इराक में प्रतिरोध की कार्रवाइयां तीव्र से तीव्रतर होती जा रही हैं। विश्व प्रभुत्व के मद में चूर अमेरिकी हुक्मरानों को पछाड़ने के लिए इराकी जनता संघर्ष के सभी रूपों का इस्तेमाल कर रही है। फिलस्तीनी इंतिफादा जैसे व्यापक जन प्रतिरोध के रूप में जनता जहां इराक के प्रमुख शहरों में सड़कों पर उतर रही है वहीं छापामार संघर्ष भी बदस्तूर जारी हैं। सद्दाम की सत्ता के उखाड़ फेंके जाने के बाद इराकी जनता शासन की बागडोर अपने हाथों में लेकर अब अपने भविष्य का निर्माण स्वयं करना चाहती है। साम्राज्यवादियों के कुकर्मों के चलते उनसे बेतरह नफरत करने वाली समूचे मध्य-पूर्व की जनता इराकियों के प्रतिरोध आंदोलन में उनके साथ है।

अमेरिकी फौजों को अपने देश से बाहर खदेड़ने और तेल संसाधनों पर विदेशियों का कब्जा नहीं होने देने के लिए सभी तरह के प्रतिरोधी समूह अपनी तरह से सक्रिय हैं। उन्हें प्रेरणा भी अलग-अलग स्रोतों से प्राप्त हो रही है। सद्दाम समर्थक जहां सत्ता हाथ से निकल जाने की वजह से उद्विग्न हैं, वहीं राष्ट्रवाद की जमीन पर खड़े होकर संघर्ष छेड़ने वाले इराकी पश्चिमी ढंग के पूंजीवादी लोकतांत्रिक शासन की स्थापना के लिए लड़ रहे हैं। जबकि इस्लामिक चरमपंथी इराक पर इस्लाम के प्रभुत्व वाली शासन व्यवस्था कायम करने के लिए कुर्बानियां दे रहे हैं। इन प्रतिरोधी समूहों की आकांक्षाएं परस्पर विरोधी हो सकती हैं लेकिन वे सबके सब साम्राज्यवादी कब्जे के खिलाफ हैं और हर हाल में उससे अपने देश को मुक्त कराना चाहते हैं।

इराक के सभी हिस्सों की यात्रा करने और प्रतिरोध आंदोलन के विभिन्न नेताओं से मुलाकात करने के बाद अरबी टीवी स्टेशन अल-हयात-एलबीसी के राजनीतिक संपादक ने इंगलैंड के 'द गार्जियन' अखबार को खबर दी कि साम्राज्यवादी कब्जा विचारधारात्मक रूप से भिन्न ताकतों इस्लामिक चरमपंथियों, बाथ पार्टी के सदस्यों और 'राष्ट्रवादियों' को अमेरिका के खिलाफ गठबंधन में एक साथ ला रहा है। चेतावनी देते हुए उन्होंने कहा, "कब्जा करने वाली फौजों की स्थिति नाजुक है। अगर वे (साम्राज्यवादी) बढ़ते प्रतिरोध की सूरत में अपनी सैन्य उपस्थिति को बढ़ाते हैं तो वे केवल इराक के राजनीतिक भविष्य को फिर से निर्धारित करने के अपने प्रयत्नों से इराकियों को और अधिक अलग करते जायेंगे और प्रतिरोध की कार्रवाइयां बढ़ती जायेंगी।"

साम्राज्यवादी इस तरह की चेतावनियों को भला गंभीरता से कब लेते हैं। अब तक का इतिहास तो यही बताता है कि विश्वव्यापी लूट के लिए पगलाये साम्राज्यवादियों के पास हताशा भरी कोशिशों को आगे बढ़ाते जाने के सिवाय और कोई चारा नहीं होता और इस क्रम में वे इंच-इंच करके अपनी कब्र खोदते जाते हैं

अपनी सर्वग्रासी पकड़ को मजबूत बनाने जाने के लिए साम्राज्यवादी अतीत में भी जनता के विभिन्न हिस्सों को आपस में लड़ाने का काम करते रहे हैं और मुंहकी खाते रहे हैं क्योंकि जनता एक के बाद एक कर के अपने अनुभवों से मुश्तरका दुश्मन की पहचान करती जाती है। अमेरिका को अभी तक इस बात को लेकर संतोष का अनुभव हो रहा था कि प्रतिरोध की कार्रवाइयां मुख्य रूप से इराक के मध्यवर्ती हिस्से तक सीमित हैं। इस क्षेत्र की बहुसंख्यक आबादी सुन्नी मुसलमानों को हमेशा से सर्वाधिक उद्धत और विद्रोह की संभावना से युक्त माना जाता रहा है। लेकिन हाल के हफ्तों में दक्षिणी हिस्से के शियाओं और उत्तर के मित्रवत कुर्दों के अमेरिका के खिलाफ खुलकर सामने आ जाने से प्रतिरोध का विस्तार हो रहा है जो कि साम्राज्यवादियों के नापाक मंसूबों पर पानी फेरता जान पड़ता है। तुर्की सरकार के अमेरिकी कब्जे की मदद में सेना तैनात करने के हाल के फैसले ने इराकी कुर्दों को अत्यधिक विचलित कर दिया है। बगदाद के तगड़ी सुरक्षा वाले होटल में अमेरिकी रक्षा उपमंत्री पाल वोल्फोविट्ज पर हाल ही में हुआ हमला प्रतिरोध की ताकतों के बढ़ते हौसले को दर्शाता है। अमेरिकी शासकों की प्रतिरोध कार्रवाइयों से उपजी बदहवासी को इस बात से समझा जा सकता है कि बुश प्रशासन शीर्ष अधिकारियों के इस आश्वासन के बावजूद कि इराक में सुरक्षा की स्थिति लगातार सुधर रही है, मानवाधिकार कार्यकर्ता वहां से पलायन कर रहे हैं। गौरतलब है कि साम्राज्यवादी देश मानवतावादी हस्तक्षेप, सहायता और लोकतांत्रिक अधिकारों के हनन की आड़ में दुनिया भर में जहां-तहां सैन्य हस्तक्षेप करते रहते हैं।

इराकी प्रतिरोध कार्रवाइयों के लड़ाके अमेरिकी फौजों को परेशान करने के लिए तरह-तरह के उपाय अपना रहे हैं। अभी बिल्कुल हाल में लड़ाकों ने पहली बार सप्लाई लाइन को प्रमुख रूप से निशाना बनाते हुए अमेरिकी फौजों के लिए सामान ले जा रही मालगाड़ी पर बमबारी की। यह हमला अमेरिका विरोधी बढ़ती प्रतिरोध कार्रवाईयों का गढ़ बन चुके फल्लुजा कस्बे से सात किलोमीटर दूर रेलवे लाइन पर किया गया। पहली मई को युद्ध समाप्ति की घोषणा के समय से अब तक 210 अमेरिकी सैनिक मारे जा चुके हैं। आमने-सामने की लड़ाई से बचते हुए इराकी लड़ाके छापामार युद्ध की रणनीति अपना रहे हैं। स्वदेशी हथियारों से राजनयिकों के ठहरने के स्थानों पर गोलाबारी करने के साथ-साथ आत्मघाती कार बम हमले भी किये जा रहे हैं। इसके अलावा, अमेरिकी सैनिकों का मनोबल तोड़ने और उन्हें छुछुआने के लिए गाहे-बेगाहे उनके ऊपर कीचड़ और पत्थर फेंकने का भी काम किया जा रहा है। घर लौटने को बेताब और विषम परिस्थितियों में जी रहे अमेरिकी सैनिक अपना विवेक खोते जा रहे हैं और हताशा में इराकी नागरिकों पर अंधाधुंध गोलीबारी करने लगे हैं।

यही कारण है कि सर्वथा अन्यायपूर्ण इस तैनाती से पैदा हुई घुटन और बेबसी के चलते इराक में अमेरिकी सैनिक आत्महत्या करने लगे हैं। 'यू. एस. टुडे' नामक अमेरिकी अखबार के मुताबिक पिछले सात महीनों में 11 सैनिक और तीन नाविक मौत को गले लगा चुके हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि अवसाद, जीने की विषम परिस्थितियां और अमानुषिक-बर्बर कार्रवाइयों से उत्पन्न होने वाला अपराधबोध इस समस्या के मूल में है। प्रसंगवश, द्वितीय विश्वयुद्ध में हिरोशिमा-नागासाकी पर परमाणु बम गिराने वाले पायलट ने बाद में आत्महत्या कर ली थी।

इराक में शांति-व्यवस्था की बहाली के लिए अमेरिका के अनुरोध पर कोई भी देश वहां सेना भेजने को तैयार नहीं है। अंतर साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्द्धा तीखी होती जा रही है। विश्व स्तर पर वर्चस्व हासिल करने की अमेरिकी कोशिशों के विरुद्ध उठने वाले यूरोपीय और नाटो देशों के स्वर क्रमशः ज्यादा मुखर होते जा रहे हैं। दुनिया के तमाम देशों की शांतिप्रिय जनता कत्लेआम करके किसी देश के प्राकृतिक संसाधनों पर जबरन कब्जा किये जाने के खिलाफ गुस्से से लबरेज है। ऐसे में अमेरिकी हुक्मरानों के मंसूबों का अधर में लटकना तय सा जान पड़ता है। और तो और अमेरिका के भीतर से भी विरोध लगातार बढ़ता जा रहा है। हमले के बहुप्रचारित औचित्य के निरा पाखंड साबित हो जाने के बाद चारों तरफ हुक्मरानों की थू-थू हो रही है।

निचोड़ के तौर पर कहा जा सकता है कि आने वाले दिनों में संघर्ष-प्रतिरोध के नये-नये रूप निश्चित रूप से उभरेंगे। जब जनता के अगुवा तत्वों द्वारा व्यापक जनता को विज्ञानसम्मत तरीके से शिक्षित- जागरूक-गोलबंद और संगठित किया जायेगा तब फिर अमेरिकी हुक्मरानों का संकट समाधान की सभी गुंजाइशों से परे छिटक जायेगा। और ऐसा होने में बहुत देर भी नहीं लगेगी क्योंकि यही इतिहास का सच है।

अतीत की जन क्रान्तियों के अनुभवों के आधार पर कहा जा सकता है कि सैन्य ताकत के बलबूते किसी देश की मुक्ति आकांक्षी जनता को लम्बे समय तक दबाये नहीं रखा जा सकता। वैसे भी कौन नहीं जानता कि हथियारों के बड़े-से-बड़े जखीरे जनसमुद्रों के महासागर में डूब जाया करते हैं।

● **कामता प्रसाद**

'परिकल्पना' का नया प्रकाशन

इराक : साम्राज्यवादी कब्ज़ा और प्रतिरोध

लेखक : हरपाल बराड़

पृ. 160, मूल्य : 40 रुपये

'जनचेतना' की सभी शाखाओं पर उपलब्ध (पते के लिए देखें पृष्ठ 2 पर नीचे)

ब्रिटेन में नस्लवाद और नवनाजीवाद का उभार

कार्यालय प्रतिनिधि

हाल ही में बीबीसी के लिए एक कार्यक्रम तैयार किया गया जिसका नाम है "द सीक्रेट पुलिसमैन"। इस कार्यक्रम के रिपोर्टर हैं मार्क डेली। कार्यक्रम के नाम से ही समझ आ जाता है कि रिपोर्टर ने संबंधित तथ्यों का खुलासा करने के लिए क्या तरीका अपनाया होगा। वह कार्यक्रम तैयार करने के लिए खुद ब्रिटेन की पुलिस में भर्ती हो गया। और जो विषय उसने चुना वह ब्रिटेन की पुलिस में नस्लवाद के उभार का भंडाफोड़ था। उसका काम और तरीका वाकई में खतरनाक और चुनौतीभरा था और उसे इसकी सजा भी भुगतनी पड़ी। पुलिस के शक के बाद उसे गिरफ्तार कर लिया गया। अब वह जमानत पर है। लेकिन इस खोज से जो तथ्य निकलकर सामने आये वे सबसे महत्वपूर्ण हैं और काबिले गौर हैं।

ब्रिटेन जैसे विकसित देश में पुलिस महकमे, खासकर निचले पुलिसकर्मियों में किस तरह नस्लवाद की भावना कूट-कूटकर भरी हुई है, यह इस कार्यक्रम में स्पष्ट दिखाया गया है। मसलन, अप्रैल 1993 में नस्लवादी गुंडों द्वारा अश्वेत किशोर स्टीफन लारेंस की हत्या पर एक पुलिसकर्मी, रॉब पुलिंग का कहना है, "स्टीफन लारेंस इसी के (मारे जाने) काबिल था और उसकी हत्या के शक में जिनको पकड़ा गया है उन आरोपियों को माफ कर दिया जाना चाहिए। पुलिंग का मानना है कि उसने बिना किसी उकसावे के एक एशियाई पर हमला किया था, और उसने कहा कि वह एक एशियाई को जरूर मारेगा। वह कहता है कि हिटलर के विचार सही थे सिर्फ उसका तरीका गलत था।

1993 में लारेंस की हत्या के मामले की जांच कर रहे मेकफरसन ने पुलिस में व्याप्त नस्लवाद की ओर इशारा किया था। इसके चलते ब्रिटिश पुलिस को खासी आलोचनाओं का सामना करना पड़ा था लेकिन तब भी आला अधिकारी इस ओर से अपनी आंख मूंदे रहे। बीबीसी की हालिया रपट के बाद एक बार फिर से ब्रिटेन की पुलिस की काफी फजीहत हो रही है। रपट जारी किये जाने के बाद से अब तक पांच पुलिस अधिकारियों को इस्तीफा देना पड़ा है और तीन को निलंबित कर दिया गया है।

यह तो सिर्फ ब्रिटेन की ही तस्वीर है। लेकिन इस बारे में कई रिपोर्टें अंतरराष्ट्रीय बुर्जुआ मीडिया में आ चुकी है कि समूचे यूरोप में एक बार फिर से नस्लवाद और नवनाजीवाद का नाग फन उठाने लगा है। इन नवफासीवादी ताकतों की प्रतिक्रिया में ब्रिटेन में एक नये किस्म का प्रतिनस्लवाद भी उभर कर सामने आ रहा है। यह भी नस्लवाद ही है लेकिन श्वेतों के खिलाफ। पिछली मई में बर्नले के स्थानीय परिषद चुनावों में आठ पार्षदों की जीत हुई जिनमें एक 21 वर्षीय जुनूनी युवा फुटबाल प्रेमी ल्यूक स्मिथ भी था। स्मिथ के चुनावी घोषणापत्र में ऐसे सामुदायिक पैनलों की व्यवस्था का वादा किया गया था जिनका लक्ष्य श्वेतों के खिलाफ नस्लवाद था। हालांकि अगस्त '03 में इसका राजनीतिक कैरियर "स्तेला आर्तोइस' की बोतल के इस्तेमाल के कारण समाप्त हो गया।

ब्रिटेन में, अथवा समूचे यूरोप में नस्लवाद और नाजीवाद का फिर से उभार कोई आश्चर्यजनक परिघटना नहीं है। इसके मूल में वह पूंजीवादी व्यवस्था है जो फासीवाद को जन्म देती है, और पुरानी फासीवादी प्रवृत्तियों को हवा देती है। आज विश्व पूंजीवाद के आर्थिक संकटों की कोख से ही स्वधीनवाली नवनाजीवादी ताकतें पैदा हो रही हैं। ये ताकतें आज यूरोपीय समाज के ताने-बाने में खतरनाक ढंग से अपनी जड़ें पसारती जा रही हैं। लेकिन इतिहास गवाह है कि अंततः यही ताकतें खुद पूंजीवाद के लिए ही भस्मासुर बन जाती हैं। मजदूरों के महान क्रान्तिकारी शिक्षक कार्ल मार्क्स ने ठीक ही कहा था, 'पूंजीवाद अपनी कब्र स्वयं खोदता है।' आज वैश्विक परिदृश्य पर अलग-अलग रूपों में मार्क्स की बात चरितार्थ हो रही है।

इन सभी रुझानों को भारतीय समाज में भी देखा जा सकता है। भारत की पुलिस भी इस तरह की फासीवादी प्रवृत्तियों का शिकार रही है। यह बात एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी द्वारा लिखी गयी एक चर्चित किताब में सामने आई है कि भारत में आजादी के बाद हुए साम्प्रदायिक दंगों के दौरान पुलिस का चरित्र एक हिन्दू दंगाई जैसा ही रहा है। यह भारतीय पुलिस तंत्र की साम्प्रदायिक हिन्दुत्ववादी चरित्र ही था जिसने गोधरा कांड के बाद हुए गुजरात के राज्य प्रायोजित नरसंहार को खुली शह और मदद दी। भारतीय पुलिस में साम्प्रदायिक हिन्दुत्वादी रुझान और ब्रिटेन की पुलिस में नस्लवाद एक ही किस्म की प्रवृत्तियां हैं। भूमण्डलीकरण के मौजूदा दौर में विश्व पूंजीवादी अर्थतंत्र के आर्थिक संकटों की कोख से ही अलग-अलग देशों में अलग-अलग खास किस्म की नवफासीवादी प्रवृत्तियां उभर रही हैं।

पूंजीवादी व्यवस्था के बढ़ते आर्थिक संकटों के साथ ही इन प्रवृत्तियों के उभरने का एक अहम कारण है-पूंजीवाद को वैधता प्रदान करने वाले औजारों का भोंथरा हो जाना। तमाम तिकड़म करके पूंजीपति और उनके चाटुकार सत्ताधीश आम जनता का ध्यान बुनियादी मुद्दों से हटाकर नस्लवाद व साम्प्रदायिकता जैसे फासीवादी "गैर मुद्दों" पर केन्द्रित करना चाह रहे हैं।

फौरी जरूरत इस बात की है कि दुनिया भर की आम मेहनतकश जनता को लुटेरों की इस घिनौनी चालों के प्रति आगाह किया जाये, गोलबंद किया जाये और मुक्तिसंघर्ष की राह पर आगे कदम बढ़ाया जाये। इन मानवताविरोधी प्रवृत्तियों से सच्ची मुक्ति तभी संभव हो पायेगी। ●

अप्टन सिंक्लेयर के उपन्यास `जंगल' का एक अंश

"मेरी आवाज़ में करोड़ों बेज़ुबानों की आवाज़ शामिल है..."

इस बार हम 'बिगुल' के पाठकों के लिए अमेरिकी लेखक अप्टन सिंक्लेयर (जन्म 20 सितम्बर 1878, निधन 25 नवम्बर 1968) के विश्वप्रसिद्ध उपन्यास 'जंगल' के कुछ संपादित अंश प्रस्तुत कर रहे हैं। शिकागो के मांस पैकिंग कारखानों में काम करने वाले हजारों मजदूरों के भयावह नारकीय जीवन और उनके संघर्षों का ब्योरा जनता के सामने लाकर इस किताब ने तहलका मचा दिया था। यहां प्रस्तुत अंश उस प्रसंग को बयान करता है जब उपन्यास का प्रमुख पात्र यूर्गिस नामक बेरोजगार मजदूर भूख और भीषण ठंड से बचने के लिए एक सभागार में जाकर शरण लेता है। यहां पहली बार वह एक समाजवादी नेता का भाषण सुनता है।

...मंच पर भाषण जारी थे और लोग तालियां बजा रहे थे और चिल्ला रहे थे पर धीरे-धीरे यूर्गिस के कानों में सारी आवाजें धुंधली पड़ने लगीं। हमेशा की तरह कई बार उसने खुद को सम्भाला और बदहवासी में संकल्प किये लेकिन हॉल गर्म और आरामदेह था और दिन भर चलने की थकान और अभी-अभी मिला भरपेट खाना अपना असर दिखा रहे थे। आखिरकार उसका सिर एक ओर लुढ़क गया और वह खर्राटे भरने लगा।

फिर से उसे किसी ने कोंचा और वह हमेशा की तरह घबरा कर उठ बैठा। अब क्या होगा? उसने अपनी नजरें मंच पर गड़ा दीं। उसने गुस्से से भरी नजरों और गालियों की कल्पना की, उसने कल्पना में देखा कि पुलिसवाला उसकी ओर बढ़ रहा है, उसकी गर्दन की ओर हाथ बढ़ा रहा है। या इस बार वह बच जायेगा? क्या इस बार वे उसे छोड़ देंगे? वह कांपता हुआ, इन्तजार करता हुआ बैठा रहा...

और तभी उसके कानों में एक आवाज आयी, एक औरत की कोमल और मीठी आवाज, "कामरेड, अगर आप सुनने की कोशिश करेंगे तो शायद आपकी दिलचस्पी पैदा हो जायेगी।"

यूर्गिस इस बात से इस तरह चौंका जितना वह पुलिस वाले का हाथ पड़ने पर भी नहीं चौंकता। उसने अब भी अपनी आंखें सामने गड़ायें रखीं और हिला भी नहीं लेकिन उसका दिल सीने में उछल पड़ा था। कामरेड! कौन थी वह जिसने उसे "कामरेड" कहकर पुकारा था?

वह काफी देर तक इन्तजार करता रहा और फिर जब उसे यकीन हो गया कि अब उसे देखा नहीं जा रहा है तो उसने कनखी से अपने बगल में बैठी औरत पर नजर डाली। वह युवा और सुन्दर थी, अच्छे कपड़े पहने हुए थी, और इस तरह की थी जिसे "लेडी" कहते हैं। और उसने उसे "कामरेड" कहकर पुकारा था!

वह ध्यान से हल्का सा मुड़ा ताकि उसे ठीक से देख सके और फिर मुग्ध होकर उसे देखने लगा। लगता था कि वह उसके बारे में सब भूल चुकी थी और मंच की ओर देख रही थी। वहां एक आदमी बोल रहा था। यूर्गिस को उसकी आवाज धुंधली सी सुनायी पड़ रही थी।...

वह आदमी लम्बा और दुबला-पतला था और उसका चेहरा उतना ही धंसा हुआ था जैसे यूर्गिस का। उसका आधा चेहरा हल्की काली दाढ़ी से ढंका था और आंखों की जगह सिर्फ दो काले गड्ढे दिखायी दे रहे थे। वह बड़ी उत्तेजना के साथ और जल्दी-जल्दी बोल रहा था। बोलते हुए वह मंच पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक चल रहा था और अपनी लम्बी बाहें इस तरह बढ़ा रहा था जैसे एक-एक श्रोता को पकड़ लेना चाहता हो। ...लेकिन तभी ऐसा लगा जैसे वक्ता सीधे उसकी ओर इशारा कर रहा है और उसी से मुखातिब है और तब यूर्गिस का ध्यान अचानक उसकी आवाज पर गया। उसकी आवाज कांप रही थी, भावनाओं से, दर्द और चाहत से थरथरा रही थी, जैसे उस पर उन तमाम चीजों का बोझ हो जिन्हें शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता। वह सुनने वाले को अपनी गिरफ्त में ले लेती थी, उसे जकड़ लेती थी, वह हिल नहीं सकता था।

"आप ये सब सुनते हैं," वह आदमी बोल रहा था, "और आप कहते हैं, 'हां, यह सच है, लेकिन यह तो हमेशा से ऐसा ही रहा है।' या आप कहते हैं, 'शायद यह बदलेगा, लेकिन हमारे समय में नहीं, इससे मुझे कुछ नहीं मिलेगा।' और इसलिये आप वापस रोजमर्रा के कमरतोड़ काम में जुट जाते हैं। आप वापस जाते हैं ताकि आर्थिक ताकत की विश्वव्यापी चक्की में आपको पीस कर मुनाफे में तब्दील किया जाता रहे! आप लौट जाते हैं, दूसरों के फायदे के लिए घण्टों तक जी-तोड़ मेहनत करने के लिए; घटिया और गन्दगी से भरे घरों में रहने के लिए; खतरनाक और प्रदूषित जगहों में काम करने के लिए; भूख और अभाव से जूझने के लिए; दुर्घटना, बीमारी और मौत से लड़ने के लिये। और हर दिन संघर्ष पहले से ज्यादा तीखा होता जाता है, रफ्तार और निर्मम होती जाती है; हर दिन आपको पहले से ज्यादा कड़ी मेहनत करनी पड़ती है और आप हालात का लौह शिंकजा पहले से ज्यादा कसता हुआ महसूस करते हैं।

"महीनों बीत जाते हैं, शायद सालों भी और तब आप फिर से आते हैं, और फिर मैं आपसे पूछता हूं, कि क्या दुख और गरीबी ने अबतक आपको समझदार नहीं बनाया है, क्या अन्याय और उत्पीड़न ने अबतक आपकी आंखें नहीं खोली हैं? मैं अब भी इन्तजार कर रहा हूं क्योंकि मैं और कुछ कर ही नहीं सकता। कोई ऐसा वीराना नहीं है जहां मैं इन चीजों से बच सकूं, कोई ऐसी पनाहगाह नहीं है जहां मैं इनसे छुप सकूं। मैं दुनिया के हर छोर तक गया हूं, और हर जगह मुझे यही अभिशप्त व्यवस्था दिखायी देती है हर जगह मैं पाता हूं कि इंसानियत की तमाम सुन्दर और उदात्त भावनाओं, कवियों के स्वप्नों और शहीदों की कुर्बानियों को जंजीरों में जकड़ कर संगठित और लुटेरी धनलिप्सा की सेवा में लगा दिया गया है! और इसलिये मैं चैन से नहीं रह सकता, मैं खामोश नहीं रह सकता, इसलिये मैं निजी सुकून और खुशी, सेहत और सम्मान को दरकिनार कर लोगों के बीच जाता हूं और अपनी आत्मा की पीड़ा को चीख-चीख कर बताता हूं! इसलिये गरीबी और बीमारी, नफरत और गालियां, धमकियां और उपहास मुझे खामोश नहीं कर सकते अदालत और जेलखाना, या दुनिया की कोई भी ताकत मेरी आवाज बन्द नहीं कर सकती। अगर मैं आज रात नाकामयाब रहा, तो मैं कल फिर कोशिश करूंगा, यह जान कर कि गलती मेरी ही होगी क्योंकि जो सपना मेरे दिलोदिमाग में है वह एक बार अगर लोगों के दिलों में उतर गया, अगर एक बार इसकी नाकामयाबी की पीड़ा को उन्होंने महसूस कर लिया तो यह पूर्वाग्रह के तमाम अवरोधों को तोड़ डालेगा, यह सुस्त से सुस्त इंसान को भी झकझोर कर हरकत में आने पर मजबूर कर देगा! सबसे अविश्वासी व्यक्ति को यह लज्जित कर देगा, सबसे स्वार्थी इंसान को यह डरा देगा, उपहास के स्वर शान्त हो जायेंगे, झूठ और बेईमानी वापस अपनी मांदों में दुबक जायेंगे और अकेला सच खड़ा रह जायेगा!

"मेरी आवाज में करोड़ों बेजुबानों की आवाज शामिल है! उन सबकी, जो उत्पीड़ित हैं और जिन्हें राहत देने वाला कोई नहीं है! उन तमाम जीवन से बहिष्कृत लोगों की आवाज शामिल है जिन्हें एक पल भी आराम नसीब नहीं है, जिनके लिए यह दुनिया एक जेल है, एक यातनागृह है, एक मकबरा है! मेरी आवाज में उस छोटे बच्चे की आवाज शामिल है जो इस वक्त दक्षिण की सूत मिल में काम कर रहा है, थकान से लड़खड़ाता हुआ, दर्द से गश खाता हुआ, जिसके पास असमय कब्र में जाने के सिवाय और कोई उम्मीद नहीं! उस मां की आवाज शामिल है जो इस रात तहखाने की एक तंग कोठरी में मोमबत्ती की रोशनी में कपड़े सिल रही है, और अपने सामने भूख से बिलखते बच्चों को देख रही है! उस आदमी की आवाज शामिल है जो अपने प्रियजनों को भूखों मरने के लिए छोड़, चिथड़ों से बने बिस्तर पर लेटा अपनी अन्तिम सांसें गिन रहा है! उस युवती की आवाज शामिल है जो इसी समय भूख और बेकारी की मारी, इस भयानक शहर की सड़कों पर चल रही है और जिसे यह फैसला करना है कि चकलाघर को चुने या झील को! मैं उन सबकी ओर से बोल रहा हूं जो लालच के शैतानी पहियों में फंसे हुए हैं, वे चाहे जो भी हों, जहां भी हों! मैं मुक्ति के लिए पुकारती इंसानियत की ओर से बोल रहा हूं! मैं इंसान की उस अमर आत्मा की ओर से बोल रहा हूं जो धूल से उठ खड़ी हुई है, उत्पीड़न और अज्ञान की सलाखों को तोड़कर जेल से बाहर निकल रही है, रोशनी का रास्ता तलाश रही है!"

वक्ता कुछ देर को थम गया। एक पल के लिए खामोशी छायी रही क्योंकि लोगों ने गहरी सांस ली, और फिर एक हजार लोग एक साथ, एक आवाज में चीख पड़े। इस सबके बीच यूर्गिस बिना हिले-डुले, स्थिर बैठा हुआ था, उसकी आंखें एकटक वक्ता पर टिकी हुई थीं, वह विस्मय से भरा हुआ था, उसका बदन थरथरा रहा था।

अचानक उस आदमी ने अपना हाथ उठाया और खामोशी छा गयी और वह फिर बोलने लगा।

"मैं आपसे अपील करता हूं," उसने कहा, "आप चाहे जो भी हों, बशर्ते आप सच्चाई की फिक्र करते हों; लेकिन सबसे बढ़कर मैं मजदूरों से अपील करता हूं, जिनके लिए ये भयानक बातें, जिनका मैंने अभी जिक्र किया, महज भावना की बातें नहीं हैं जिनसे दिल बहलाया जाए और फिर किनारे रखकर भूल जाया जाए; जिनके लिए ये रोजमर्रा की कठोर और निर्मम सच्चाईयां हैं, उनके शरीर पर जकड़ी जंजीरें हैं, उनकी पीठ पर पड़ने वाले चाबुक हैं, उनकी आत्मा को झुलसाने वाले अंगार हैं। मैं आपसे कहता हूं, मेहनतकश लोगो! आप सब मेहनत करने वालों से, जिन्होंने इस देश को बनाया है लेकिन इसे चलाने वाली तमाम परिषदों में जिनकी कोई आवाज नहीं है! आपसे, जिनकी तकदीर है सिर्फ बोना ताकि फसल दूसरे काट ले जायें; दूसरों के हुक्म पर काम में जुटे रहना और बोझ ढोने वाले पशु से ज्यादा किसी चीज की मांग न करना, बस इतना पाना कि अगले दिन तक जी सकें। मैं आपके ही पास मुक्ति का सन्देश लेकर आया हूं, मैं आप ही से अपील कर रहा हूं। मैं जानता हूं कि आपसे यह मांग करने का क्या मतलब है मैं जानता हूं क्योंकि मैं आपकी जगह रह चुका हूं, मैंने आपकी जिन्दगी जी है और मुझसे बढ़कर इस बात को कोई नहीं समझ सकता। मैं जानता हूं कि फुटपाथ पर रहने वाले छोकरे, बूटपालिश करने वाले एक लड़के की जिन्दगी क्या होती है, रोटी का एक टुकड़ा खाकर सीढ़ियों और खाली गाड़ियों के नीचे सोने का क्या मतलब होता है। मैं जानता हूं कि उम्मीदें पालने की हिम्मत करने, बड़े-बड़े सपने संजोने और उन्हें मरते देखने का मतलब क्या होता है अपनी आत्मा के तमाम सुन्दर फूलों को जिन्दगी की हैवानी ताकतों के कदमों तले रौंदे जाते देखने का मतलब क्या होता है। मैं जानता हूं कि एक मेहनतकश आदमी के लिए ज्ञान की कीमत क्या होती है मैंने अपने खाने और नींद से, शरीर और मन की तकलीफ से, अपनी सेहत से, यहां तक कि लगभग अपनी जिन्दगी से यह कीमत चुकायी है और इसलिये जब मैं आपके पास उम्मीद और आजादी की कहानी लेकर, एक नयी दुनिया बनाने का, एक नयी तरह की मेहनत का सपना लेकर आता हूं तो मुझे आपको इस कदर तुच्छताओं में जीते हुए, सुस्त और सन्देह से भरा हुआ पाकर हैरानी नहीं होती। मैं हताश नहीं होता हूं क्योंकि मैं उन ताकतों को भी जानता हूं जो आपको लगातार हांक रही हैं क्योंकि मैं गरीबी के निर्मम चाबुक को जानता हूं, दासता और अपमान के दंश को जानता हूं। क्योंकि मुझे यकीन है कि आज जो भीड़ मुझे सुनने आयी है, उसमें न जाने कितने उदासीन और बेपरवाह होंगे, न जाने कितने महज उत्सुकतावश या मजाक उड़ाने आये होंगे लेकिन उनके बीच कम से कम एक आदमी ऐसा जरूर होगा जिसे दर्द और तकलीफ ने बदहवास कर दिया है, जिसे अन्याय और अत्याचार ने झकझोर कर ध्यान देने के लिए बाध्य कर दिया है। और उस आदमी तक मेरे शब्द ऐसे पहुंचेंगे जैसे अंधेरे में सफर कर रहे मुसाफिर के लिए बिजली की कौंध रास्ता दिखाते हुए, तमाम बाधाओं और खतरों को उजागर करते हुए, मुश्किलों को दूर करते हुए! उसकी आंखों से पट्टी उतर जायेगी, उसके शरीर को जकड़ी जंजीरें टूट कर गिर जायेंगी वह कृतज्ञता की चीख के साथ उछल पड़ेगा, आखिरकार वह एक आजाद इंसान की तरह कदम बढ़ायेगा! वह आदमी इंसान की रची दासता से मुक्त होगा! ऐसा आदमी जिसे फिर कभी जाल में फांसा नहीं जा सकेगा जिसे कोई झूठे वादे फुसला नहीं सकेंगे, जिसे धमकियां डरा नहीं सकेंगी; जो आज रात के बाद पीछे नहीं बल्कि आगे बढ़ेगा, जो पढ़ेगा और समझेगा, जो अपनी तलवार थामकर अपने कामरेडों और भाइयों की फौज में अपनी जगह लेगा। जो इस सन्देश को दूसरों तक ले जायेगा, जैसे मैं इसे उस तक लाया हूं आजादी और रोशनी का अनमोल तोहफा दूसरों तक पहुंचायेगा, जो न मेरा है, न उसका बल्कि इंसानियत की साझी विरासत है!

"मेहनतकशो, मेहनतकश-कामरेडो! आंखें खोलो और अपने चारों ओर देखो! तुम इतने अरसे से कमरतोड़ काम और बदहाली में रहे हो कि तुम्हारी संवेदनाएं कुन्द हो गयी हैं, तुम्हारी आत्माओं पर घट्ठे पड़ गये हैं; लेकिन एक बार इस दुनिया की असलियत को समझो इसकी परम्पराओं और प्रथाओं के चिथड़ों को नोचकर फेंक दो इसकी वीभत्स नंगी असलियत को अपनी आंखों से देखो! इसे समझो, समझो इसे! समझो कि आज रात मंचूरिया के मैदानों में दो दुश्मन फौजें एक-दूसरे के सामने हैं कि ठीक इसी वक्त, जब हम यहां बैठे हैं, दस लाख लोगों को एक-दूसरे को नोच डालने, पागलों की तरह एक-दूसरे के टुकड़े कर डालने के लिए ललकारा जा रहा है! और यह बीसवीं सदी में हो रहा है...

"शायद मंचूरिया आपके लिए बहुत दूर हो तो मेरे साथ यहां आइये, यहां शिकागो में आइये। यहां इस शहर में आज रात दस हजार औरतें गन्दी कोठरियों में बन्द हैं और भूख से मजबूर होकर जिन्दा रहने के लिए अपनी देह का सौदा कर रही हैं। और हम इसे जानते हैं, और इस पर मजाक करते हैं! और ये सारी औरतें वैसी ही बनी हैं जैसी आपकी मां, वे आपकी बहनें हो सकती हैं, आपकी बेटियां हो सकती हैं; जिस बच्ची को आज रात आप घर पर छोड़कर आये हैं, जिसकी हंसती आंखें सुबह आपका स्वागत करेंगी यह भविष्य उसका भी हो सकता है! आज रात शिकागो में दस हजार बेघर, बदहाल लोग हैं, जो काम करना चाहते हैं और एक मौके के लिए गिड़गिड़ा रहे हैं, फिर भी वे भूखे हैं और आने वाले भयावह जाड़े का आतंक के साथ सामना कर रहे हैं! आज रात शिकागो में एक लाख बच्चे अपनी रोटी कमाने की कोशिश में अपने आपको निचोड़ रहे हैं और अपनी जिन्दगी को तबाह कर रहे हैं! एक लाख मांएं अभाव और गन्दगी में जीते हुए अपने बच्चों का पेट भरने के लिए जूझ रही हैं! एक लाख बूढ़े लोग, असहाय और बहिष्कृत, यंत्रणाओं से मुक्ति दिलाने के लिए मौत का इन्तजार कर रहे हैं! यहां दस लाख लोग, औरत, मर्द और बच्चे उजरती गुलाम

(पेज 11 पर जारी)

इस बचपन की राख बारूद बनेगी!

हर साल की तरह इस साल भी दिल्ली में देश भर में सैकड़ों करोड़ रुपये के पटाखे फूंक डाले गये। बमों के कानफोड़ू शोर में इन्हें बनाने वाले बच्चों की चीखें दब गईं, उनके जीवन का अंधेरा फुलझड़ियों और अनारों की रंगीन रोशनियों में खो गया। मेहनत की लूट पर जीने वाले उद्योगपतियों, व्यापारियों, ठेकेदारों, अफसरों की निठल्ली-निकम्मी ऐयाश औलादों ने चंद घंटों की मस्ती के लिए कुल 250 करोड़ रुपये के पटाखे जला डाले। एक-एक परिवार ने 50 हजार से लेकर 5 लाख तक फूंके। उनकी देखा-देखी मध्यवर्गीय बाबुओं ने भी रोते-झींकते हुए कुछ सौ से लेकर कुछ हजार तक स्वाहा कर डाले।

क्या आपको मालूम है कि पटाखे बनाने में किन चीजों का इस्तेमाल होता है-फास्फोरस, क्लोरेट, पोटाश, गंधक और लाखों छोटे-छोटे बच्चों का खून! जी हां, भारत के दो लाख से ज्यादा बच्चे अपने फेफड़े, जिगर, गुर्दे खराब करके, अपना सारा बचपन बारूदी घुटन में जलाकर ये आतिशबाजियां तैयार करते हैं।

तमिलनाडु के शिवकाशी, विरुदनगर और सेत्तूर जिलों में डेढ़ लाख से ज्यादा बच्चे अपना बचपन, भविष्य और स्वास्थ्य पटाखे बनाने में चौपट कर रहे हैं। इसके अलावा उत्तर प्रदेश के झांसी, लखनऊ, कानपुर, इटावा, बनारस, बरेली आदि; राजस्थान के जयपुर, बीकानेर, उदयपुर, मध्यप्रदेश के भोपाल, जबलपुर, इंदौर और सतना, हरियाणा के रोहतक और भिवानी और पश्चिम बंगाल के हावड़ा, चौबीस परगना आदि जिलों में पचास हजार से ज्यादा मासूम बच्चे तिल-तिल कर मरते हुए मालिकों के लिए मुनाफा और मालिक वर्ग की औलादों के लिए कुछ घंटों का मनोरंजन पैदा कर रहे हैं।

दिवाली के मौके पर पटाखों की मांग इतनी बढ़ जाती है कि सितम्बर और अक्टूबर के महीनों में हजारों और बच्चे इस जानलेवा काम में झोंक दिये जाते हैं। मुनाफे की हवस में पागल मालिक सुरक्षा के हर इंतजाम को ताक पर धरकर बेतहाशा काम कराते हैं जिससे रोज छोटी-बड़ी दुर्घटनाएं होती रहती हैं। इनमें से ज्यादातर की तो किसी को खबर ही नहीं मिल पाती है।

पटाखे बनाने में अत्यन्त विषैले और विस्फोटक रसायनों का इस्तेमाल होता है जो बेहद ज्वलनशील होते हैं। जरा-सी चूक से भयंकर अग्निकांड हो जाता है। इन रसायनों के साथ काम करने वाले बच्चे आये दिन दुर्घटनाओं के शिकार होते रहते हैं। कितने ही बच्चों के हाथ इन रसायनों से जल जाते हैं, कई की आंखें फूट जाती हैं, कितने ही अपने हाथ-पैर गंवा बैठते हैं।

पिछले कुछ वर्षों की बड़ी दुर्घटनाओं पर ही नजर डालें तो पता चलेगा कि ये बच्चे कैसे जान पर खेलते हैं। 4 अक्टूबर 1994 को झांसी के पटाखा कारखाने में विस्फोट में 70 जानें गईं। विस्फोट इतना भयंकर था कि सिर्फ मांस के लोथड़े मिले। इससे पहले 24 मई 1994 को रोहतक के पास एक पटाखा कारखाने में हुए धमाके में 30 मजदूर मारे गये जिनमें ज्यादातर तमिलनाडु से बंधुआ बनाकर लाये गये बच्चे थे। 11 सितम्बर 1995 को प. बंगाल के हावड़ा जिले की पटाखा फैक्टरी में विस्फोट से 17 बच्चों की जान गई और 140 बुरी तरह झुलस गये। 17 जनवरी 1998 को हरियाणा के दादरी में पटाखों की अवैध फैक्टरी में आग लगने से 13 मजदूर मारे गये। पिछले साल राजस्थान के चौमू में पटाखा कारखाने में विस्फोट से 15 कारीगरों की जान चली गई जिनमें 8 बच्चे थे। सन 2000 में शिवकाशी के एक विस्फोट में 48 बाल मजदूरों के चिथड़े उड़ गये थे। ये भयानक फेहरिस्त बहुत लम्बी है। 'बिगुल' के सारे पन्ने भर जायेंगे तब भी यह अधूरी ही रहेगी क्योंकि ज्यादातर घटनाओं को तो दबा दिया जाता है।

पिछले वर्षों की तरह इस बार भी दिवाली के दो-चार दिन आगे-पीछे अखबार और टीवी में बाल मजदूरों की दुर्दशा पर घड़ियाली आंसू बहाये गये। अंग्रेजीदां पब्लिक स्कूलों में बच्चों से पटाखे न छुड़ाने का संकल्प कराया गया। 'बचपन बचाने' के नाम पर धंधा चलाने वाले तमाम एनजीओ और फैशनपरस्त "सामाजिक कार्यकर्ताओं व कार्यकर्त्रियों" ने टीवी कैमरों के सामने पटाखों को पानी में डालकर सांकेतिक विरोध दर्ज कराया और फिर सब लोग हंसी-खुशी दिवाली का जश्न मनाने में जुट गये जिससे पटाखों की कुल बिक्री ने देश भर में नया रिकार्ड बनाया।

जब तक मुनाफे का यह घिनौना कारोबार चलता रहेगा, इन घड़ियालों के आंसू बहते रहेंगे और लाखों बच्चों की जिंदगी राख होती रहेगी। मजदूरों की मुक्ति का रास्ता बताने वाले कार्ल मार्क्स ने 150 वर्ष पहले ही कहा था कि पूंजीवाद का वैभव मासूम बच्चों के खून में लिथड़ा होता है। पूंजीवाद के महल की नींव में करोड़ों मासूम जिंदगियां दफ्न हैं। लेकिन इन जले हुए बचपनों की राख कभी बुझती नहीं। वह धीरे-धीरे बारूद बन रही है और एक दिन आयेगा जब विस्फोट से इस महल के परखच्चे उड़ जायेंगे।

● सत्यप्रकाश

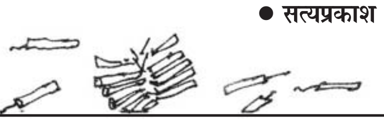

शिवकाशी में पटाखे बनाने वाले बच्चे की कविता

बचपन में
बनवाते हो पटाखे
और
नौजवानी में बम बनाने से
रोकते हो?
आज जीने के लिए
बनाते हैं पटाखे,
कल जीने के लिए
क्यों न बनायें बम?
आज
तुम्हारे मुनाफे की शर्त है
हमारा जीना,
लेकिन मत भूलना
कि हमारे जीने की शर्त है
तुम्हारे मुनाफे का खात्मा

-कात्यायनी

"मेरी आवाज़ में करोड़ों बेज़ुबानों की आवाज़ शामिल है..."

(पेज 10 से आगे)

की अभिशप्त जिन्दगी जी रहे हैं; जो तबतक काम करते हैं जबतक थक कर गिर नहीं जाते और बस इतना पाते हैं कि जिन्दा रह सकें; जिनकी जिन्दगी में एकरसता और थकान, भूख और अभाव, गर्मी और सर्दी, गन्दगी और बीमारी, अज्ञान और नशे में डूबे रहना और बुराई के सिवाय कुछ नहीं है! और फिर मेरे साथ पन्ना पलटिये और तस्वीर का दूसरा पहलू देखिये। यहां हजार या शायद दस हजार लोग हैं जो इन गुलामों के मालिक हैं, जिनका इनकी मेहनत पर अधिकार है। वे जो पाते हैं उसे अर्जित करने के लिए कुछ नहीं करते, उन्हें यह मांगना भी नहीं पड़ता यह खुद उनके पास चला आता है, उन्हें बस यह फिक्र करनी होती है कि इसे खर्च कैसे करें। वे शानदार महलों में रहते हैं, वे ऐसी ऐयाशी और फिजूलखर्ची से भरी जिन्दगी बिताते हैं जिसे शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता, जिसके आगे कल्पना भी हार मान लेती है, जिसे देखकर आत्मा कै कर देती है और गश खा जाती है। वे एक जोड़ी जूते, एक रूमाल या जुराबों पर सैकड़ों डालर खर्च कर देते हैं; वे घोड़ों और मोटरकारों और नौकाओं पर, महलों और दावतों पर, अपने शरीर पर सजाने के लिए छोटे-छोटे चमकीले पत्थरों पर लाखों-लाख डालर फूंक देते हैं। उनकी जिन्दगी दिखावे और उद्दण्डता में एक-दूसरे को पछाड़ने के लिए मची हुई होड़ है, जरूरी और उपयोगी चीजों को नष्ट करने, अपने जैसे इंसानों की मेहनत और जिन्दगियों को बरबाद करने, राष्ट्रों के प्रयासों और तकलीफों को मिट्टी में मिला देने, इंसानियत के आंसुओं और खून-पसीने को अपनी सनकों के लिए उड़ा देने की एक होड़ है! यह सब उनका है-यह उन तक पहुंच जाता है; जैसे तमाम सोतों का पानी छोटी नदियों में गिरता है, छोटी नदियां बड़ी नदियों में और बड़ी नदियां समन्दर में गिरती हैं। ऐसे ही खुद-ब-खुद समाज की सारी सम्पदा उनके हाथों में पहुंच जाती हैं। किसान जमीन जोतता है, खनिक धरती के सीने में खुदाई करता है, बुनकर करघा चलाता है, मिस्त्री ईंटें चुनता है; वैज्ञानिक आविष्कार करता है, हुनरमन्द आदमी चीजें गढ़ता है, विद्वान अध्ययन करता है, कलाकार गाता है और इस सबका नतीजा-हाथों और दिमाग के श्रम के तमाम उत्पाद एक विशाल धारा में मिल कर उनकी तिजोरियों में समा जाते हैं! पूरा समाज उनकी जकड़ में है, दुनिया का सारा श्रम उनकी दया पर है और वहशी भेड़ियों की तरह वे इसे नोचते-चीथते रहते हैं, भूखे गिद्धों की तरह वे नोचते-खाते रहते हैं! इंसानियत की सारी ताकत पर उनका कब्जा है, और सारी दुनिया के लोग चाहे जो भी करें, वे उन्हीं के लिए जीते-मरते हैं! वे सिर्फ समाज के श्रम के ही मालिक नहीं है, उन्होंने सरकारों को भी खरीद लिया है; और हर जगह वे अपनी इस चुरायी हुई और बलात्कृत ताकत का इस्तेमाल अपने विशेषाधिकारों को और मजबूत करने के लिए करते हैं, उन नहरों को और गहरा और चौड़ा बनाने के लिए करते हैं जिनसे होकर मुनाफे की नदी उन तक पहुंचती रहती है! और तुम, मेहनतकश लोगो, मजदूरो! तुम्हें इसका आदी बना दिया गया है, तुम बोझ ढोने वाले पशुओं की तरह काम में जुते रहते हो, सिर्फ आज की, आज के दर्द की फिक्र करते हो लेकिन क्या तुममें से एक भी ऐसा आदमी है जो मानता है कि ऐसी व्यवस्था हमेशा बनी रहेगी? क्या आज रात श्रोताओं में एक भी ऐसा कट्टर और गिरा हुआ आदमी है जो मेरे सामने खड़ा होकर यह कह सके कि वह मानता है कि हमेशा ऐसा ही चलता रहेगा; कि समाज के श्रम का उत्पाद, इंसानियत के अस्तित्व के तमाम साधन हमेशा ही कामचोरों और परजीवियों के हाथों में रहेंगे, हमेशा ही ऐयाशी और दिखावे पर फूंके जाते रहेंगे। हमेशा ही चन्द लोगों की मर्जी के मुताबिक उड़ाये जाते रहेंगे; जो यह कह सके कि इंसानियत के श्रम पर कभी भी, कहीं भी इंसानियत का अधिकार नहीं होगा, ताकि उसका इंसानियत की भलाई के लिए, इंसानियत की मर्जी के मुताबिक इस्तेमाल किया जा सके। लेकिन अगर ऐसा होना है, तो यह कैसे होगा कौन सी ताकत इसे सम्भव बनायेगी? क्या तुम सोचते हो कि तुम्हारे मालिक इस काम को पूरा करेंगे, क्या वे तुम्हारी मुक्ति का फरमान जारी करेंगे? क्या वे आजादी की तलवार गढ़ कर तुम्हें देंगे, क्या वे तुम्हारे लिए फौज खड़ी करेंगे और मैदान में उसका नेतृत्व करेंगे? क्या उनकी दौलत इस काम के लिए खर्च होगी? क्या वे तुम्हें शिक्षित करने के लिए कालेज खोलेंगे, क्या वे तुम्हारी आवाज दूसरों तक पहुंचाने के लिए अखबार छापेंगे और संघर्ष को दिशा देने और आगे बढ़ाने के लिए राजनीतिक पार्टियां बनायेंगे? क्या तुम यह देख नहीं सकते कि ये काम तुम्हारा है? तुम्हें इसका सपना देखना है, तुम्हें यह संकल्प करना है और तुम्हें इसे अमल में लाना है? कि अगर यह काम होगा तो इसे हर उस बाधा से टकराना होगा जो दौलत और ताकत खड़ी कर सकती है इसे उपहास और कुत्सा प्रचार का, नफरत और दमन का, लाठियों और जेलों का सामना करना होगा। यह काम अन्धाधुन्ध दमन के सामने खड़े तुम्हारे नंगे सीनों के दम पर होगा! यह काम अन्धी और निर्मम तकलीफों से मिली कठोर और कड़वी शिक्षा से होगा! अनगढ़ मस्तिष्क की तकलीफदेह कोशिशों से होगा, शिक्षा से वंचित आवाजों के टूटे-फूटे शब्दों की ताकत से होगा! आत्मा की उदास और एकाकी प्यास से होगा; ढूंढ़ने, तड़पने और कोशिश करने से होगा, दिल के दर्द और खून और पसीने से होगा! यह काम उस पैसे से होगा जिसकी कीमत भूखे रहकर चुकायी गयी है, नींद के बदले हासिल किये गये ज्ञान से होगा, फांसी के फन्दे के साये में दिये गये पैगाम से होगा! इस आन्दोलन की जड़ें सुदूर अतीत में हैं, यह अभी एक धूमिल और असम्मानित चीज है जिसका कोई भी मजाक उड़ा सकता है, कोई भी इससे नफरत कर सकता है; यह एक अप्रिय चीज है, जिसमें प्रतिशोध और नफरत का एक पहलू है लेकिन तुम्हारे लिए, मेहनतकश के लिए, उजरती गुलाम के लिए, यह एक पुकार है जिसे दबाया नहीं जा सकता, अनसुना नहीं किया जा सकता, जिससे तुम बच नहीं सकते, चाहे तुम दुनिया में कहीं भी हो! इस पुकार में तुम्हारे तमाम दर्द, तुम्हारी तमाम इच्छाओं की आवाज शामिल है, तुम्हारे फर्ज और तुम्हारी उम्मीद की आवाज शामिल है! इसमें हर गरीब की आवाज शामिल है जो यह मांग कर रहा है कि गरीबी का अब अन्त होना चाहिए! हर उत्पीड़ित की आवाज शामिल है जो उत्पीड़न के खात्मे की घोषणा कर रहा है! इसमें तकलीफें सहकर हासिल ताकत की आवाज शामिल है, कमजोरी को कुचलकर किये गये संकल्प की आवाज शामिल है; दुख और हताशा की अतल गहराई में जन्मी खुशी और साहस की आवाज शामिल है! इसमें अन्याय और नफरत के शिकार श्रम की आवाज शामिल है, उस ताकतवर देव की आवाज जो आज सोया पड़ा है वह विराट और महाबलवान है लेकिन उसके हाथ-पांव जकड़े हुए हैं, उसे अन्धा बना दिया गया है और वह अपनी ही ताकत से अनजान है। और अब प्रतिरोध का एक स्वप्न उसके भीतर जागा है, उसके भीतर उम्मीद और डर की कश्मकश चल रही है, और अचानक वह करवट बदलता है, और एक जंजीर चटख जाती है और उसके विराट शरीर में रोमांच की एक लहर दौड़ जाती है और एक पल में उसका स्वप्न एक कार्रवाई में बदलने लगता है! वह हुंकार कर उठने लगता है, और उसके बन्धन टूट कर गिर जाते हैं, उसकी पीठ पर लदा बोझ गिर जाता है, वह अपने पांवों पर खड़ा हो जाता है; ऊंचा, विशालकाय, वह विजयोल्लास से भर कर चिल्लाता है!"

भावनाओं के ज्वार में वक्ता की आवाज बीच में ही टूट गयी; अपनी बांहें ऊपर फैलाये हुए वह मंच पर खड़ा था और ऐसा लग रहा था जैसे उसके स्वप्न की शक्ति ने उसे ऊपर उठा दिया है। लोग चिल्ला पड़े और एक साथ उठ खड़े हुए; वे खुशी और उत्तेजना से चीख रहे थे और जोर-जोर से अपने हाथ हवा में लहरा रहे थे। और यूर्गिस उनके साथ था, वह गला फाड़कर चिल्ला रहा था। वह खुद को रोक नहीं पा रहा था क्योंकि अपने भीतर उमड़ती भावनाओं के तनाव को बर्दाश्त करना उसके बस के बाहर था।...

जंगल (उपन्यास)
लेखक : अप्टन सिंक्लेयर
पृष्ठ : 360, मूल्य : 75 रुपये
प्राप्त करें : जनचेतना से

पंजीयन संख्या - 71980/99, डाक पंजीयन संख्या - LW-NP/349/2003

उत्तरांचल भू-अध्यादेश : क्यों और किसके लिए?

अध्यादेश का मुख्य मकसद : छोटे और मँझोले किसानों के मालिक बने रहने के भ्रम को और बढ़ाना ● उन्हें अपनी जमीनें और सस्ती दरों पर बेचने के लिए विवश करने के हालात पैदा करना ● मेहनतकशों की एकजुटता में फाँकें-दरारें पैदा करना ● राज्य के पूंजीपतियों-भूस्वामियों को एक तरह का "आरक्षण" ● बाहरी पूंजीपतियों के हितों को भी नुकसान नहीं

विशेष संवाददाता

उत्तरांचल सरकार के नये भू-अध्यादेश को लेकर सभी चुनावी पार्टियों की राजनीतिक सरगर्मियाँ उफान पर हैं। प्रदेश की कांग्रेसी सरकार का दावा है कि यह भू-अध्यादेश उत्तराखण्ड की गरीब जनता के हित में है, क्योंकि हिमाचल प्रदेश के *'लैण्ड टेनेन्सी ऐण्ड रिफॉर्म ऐक्ट 1972'* की तर्ज पर इस अध्यादेश द्वारा राज्य के पर्वतीय और मैदानी क्षेत्र की जमीन की बाहरी लोगों द्वारा खरीद-फरोख्त पर रोक लग जायेगी। ऊपरी तौर पर देखा जाये तो यह तर्क उचित ही लगता है कि इस पिछड़े राज्य की ग़रीब जनता की जमीनें खरीदकर धनी लोगों द्वारा उन्हें उजाड़े जाने पर कानूनी रोक लगाई जाये। लेकिन क्या यही वास्तविकता है? गहराई में जाकर अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि सच्चाई कुछ और ही है।

उत्तराखण्ड की गरीब जनता में भू-माफिया और जंगल माफिया के खिलाफ तथा आम ग़रीबों की जमीनें खरीदकर रिसॉर्ट व होटल वगैरह बनाने वाले धनपतियों के खिलाफ आक्रोश एक लम्बे समय से सुलगता रहा है। कांग्रेसी सरकार ने इसी जन-भावना को भुनाकर अपनी चुनावी गोट लाल करने की एक शातिराना चाल चली है। सच्चाई यह है कि गरीबों की जमीनें हड़पने वाले धनपतियों के लिए इस भू-अध्यादेश में तमाम गुंजाइशें रख छोड़ी गयी हैं। इससे भी मुख्य बात यह है कि इस अध्यादेश का जो लाभ मिलेगा वह भी उत्तराखण्ड के स्थानीय पूँजीपतियों, नौकरशाहों और उच्च मध्य वर्ग के लोगों को ही मिलेगा। यहाँ की आम मेहनतकश जनता का इससे कुछ भी अला-भला नहीं होने वाला है।

राज्य के औद्योगिक विकास की आड़ में यह अध्यादेश देशी-विदेशी पूँजीपतियों को औने-पौने दाम पर गरीबों की जमीनें खरीदने की पूरी छूट देता है। आज प्रदेश का जो औद्योगिक परिदृश्य है, उसे ही यदि देखा जाये तो स्थिति साफ हो जाती है। औद्योगिक विकास के नाम पर पहले ही जो जमीनें मिट्टी के मोल देशी कारखानेदारों और विदेशी कम्पनियों को दी गयीं थीं, उनपर खड़े पचहत्तर फीसदी कारखानों पर ताले लटके हुए हैं और जमीनों पर मालिक पूँजीपतियों का कब्जा बरकरार है। उससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि आज देश के जिन इलाकों में भी उद्योग लग रहे हैं, उन इलाकों की व्यापक गरीब जनता की जीवन-स्थितियों में कोई भी बुनियादी बदलाव नहीं हो रहा है। उन्नत मशीनों वाले कारखानों में जो भी रोजगार की गुंजाइश बनती है, उसमें देश के करोड़ों बेकार मेहनतकशों की एक छोटी-सी आबादी ही खप पाती है। जिन्हें काम मिल पाता है, वे भी बारह-बारह घण्टे हाड़ गलाने के बाद बमुश्किल तमाम दो जून की रोटी ही जुटा पाते हैं। उदारीकरण-निजीकरण के इस दौर में ज्यादातर काम दिहाड़ी या ठेके पर ही कराये जाते हैं। नौकरी की कोई सुरक्षा नहीं है। पुराने मजदूरों को निकालकर नयों की भरती का सिलसिला लगातार जारी रहता है ताकि श्रमशक्ति को मिट्टी के मोल खरीदकर अतिलाभ निचोड़ने का सिलसिला जारी रह सके। ऐसी स्थिति में, पूँजीपतियों द्वारा जमीनें खरीदकर कारखाने लगाने से गरीब मेहनतकश जनता की किस्मत सँवर जायेगी, ऐसी उम्मीद कोई हद दर्जे का नासमझ व्यक्ति ही पाल सकता है।

इसी तरह से यह अध्यादेश धार्मिक संस्थाओं और शैक्षिक संस्थाओं को भी जमीन-खरीद की खुली छूट देता है। उत्तराखण्ड का बच्चा-बच्चा इस सच्चाई से परिचित है कि हरिद्वार-ऋषिकेश से लेकर सुदूर पर्वतीय क्षेत्र तक फैला हुआ मठों-महन्तों का सम्पत्ति-साम्राज्य कितना विराट है। एक-एक मठ के पास करोड़ों नहीं, बल्कि अरबों की सम्पत्ति और जमीनें हैं। भक्तों की "सुविधा" के नाम पर बनाये गये ऐसे अतिथिगृह हैं जो पाँच सितारा होटलों को मात देते हैं और जिन्हें एकदम व्यावसायिक ढंग से चलाकर सालाना करोड़ों की कमाई की जाती है जिनपर किसी भी तरह का टैक्स नहीं दिया जाता। बहुतेरे मठों के अपने फॉर्म और डेयरी आदि भी हैं। कई धार्मिक ट्रस्टों के न्यासी-मण्डल में देश के बड़े-बड़े पूँजीपति घरानों के लोग शामिल हैं। पूँजीवादी समाज में धर्म के धन्धे में कितना अकूत मुनाफा है, यह जानने के लिए उत्तराखण्ड के तीर्थस्थलों का एक दौरा भर काफी है।

यही हाल शिक्षा के व्यवसाय का है। देहरादून, मसूरी, नैनीताल, रानीखेत सहित उत्तराखण्ड के कई स्थानों पर स्थापित देश के सबसे मँहगे अभिजात स्कूलों को चलाने वाले ट्रस्टों पर देश के शीर्षस्थ पूँजीपति, नेता और अफसर काबिज हैं। ये संस्थाएँ सालाना करोड़ों का लाभ कमाती हैं। उत्तराखण्ड की आम आबादी न तो इन संस्थाओं में रोजगार पाती है, न ही इनके बच्चे इन स्कूलों के अन्दर प्रवेश पा सकते हैं। उत्तरांचल भू-अध्यादेश देश के धन्ना सेठों को इस बात की खुली छूट देता है कि वे स्कूल, शोध-संस्थान और फल-चाय-पशुधन आदि के प्रायोगिक फार्म एवं शोध-संस्थान आदि के नाम पर जमीनें खरीद सकें और बेशुमार मुनाफा बटोर सकें। यह भी गौरतलब है कि सुधार के नाम पर पहाड़ों में दूर-दूर तक पैठे साम्राज्यवादी एजेण्टों के एन.जी.ओ. नेटवर्क को भी इस अध्यादेश के प्रभाव से सर्वथा अछूता छोड़ दिया गया है।

जाहिर सी बात है कि यह अध्यादेश पूँजीपतियों, व्यापारियों, नेताओं, अफसरों और उच्च मध्यवर्ग के लोगों को इस बात की पूरी गुंजाइश देता है कि वे राज्य के पर्वतीय और मैदानी क्षेत्र के छोटे मालिक किसानों की जमीनें खरीदकर तरह-तरह से मुनाफा कमाने वाले धन्धे खड़े कर सकें। लेकिन यदि कोई आम नौकरीपेशा मध्यवर्गीय आदमी, जो राज्य से बाहर का हो, यहाँ जमीन खरीदकर दो कमरे का घर बनाना चाहे, तो उसके लिए अब यह मुमकिन नहीं होगा। इसतरह इस अध्यादेश ने थैलीशाहों को लूट की पूरी छूट देते हुए आम आदमी को ही आदमी के खिलाफ खड़ा कर देने का काम किया है। उल्लेखनीय है कि भू-अध्यादेश न तो उत्तर प्रदेश भूमि सुधार अधिनियम की धारा 86 को समाप्त करने की बात करता है, न ही सीलिंग ऐक्ट लागू करके सैकड़ों एकड़ के फार्मों के मालिकों के हितों को छूने की कोशिश करता है।

उत्तराखण्ड की जमीनी हकीकत से वाकिफ हर आदमी जानता है कि पर्वतीय क्षेत्र की अधिकांश कीमती और मौके की जमीनों पर ट्रस्ट-सोसाइटी आदि बनाकर शिक्षा-माफिया, धर्म-माफिया, होटल-व्यवसायी, ठेकेदार, अफसर आदि पहले से ही काबिज हैं। इनके हितों पर अध्यादेश कहीं से भी कोई चोट नहीं करता। जहाँ तक तराई के मैदानी इलाके की बात है, वहाँ ज्यादातर जमीनें हजारों-सैकड़ों और पचासों एकड़ के फार्मों के मालिक पूँजीवादी भूस्वामियों के पास पहले से ही हैं। इनके ऊपर अध्यादेश का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। यही नहीं, अध्यादेश के मुताबिक, जिस परिवार का एक भी व्यक्ति "कृषक" होगा, उसके जमीन खरीदने पर कोई पाबन्दी नहीं होगी। यानी "कृषक" की सरकारी परिभाषा में आने वाले बादल, बरनाला, फिल्म स्टार धर्मेन्द्र और अकबर अहमद डम्पी जैसे तराई के हजारों पूँजीवादी फार्मर जमीनें खरीदते रह सकेंगे, जबकि राज्य में दसियों-बीसियों साल से रहकर जीविका कमाने वाला कोई आम आदमी इस हक से पूरी तरह से वंचित होगा।

सौ बात की एक बात यह है कि जमीन वही बेचेगा जो जमीन का मालिक हो। उत्तराखण्ड देश के उन सबसे पिछड़े राज्यों में से एक है, जहाँ भूमिहीन मेहनतकशों की भारी आबादी रहती है। उसके पास न बेचने को जमीन है, न ही जमीन खरीदने के लिए पैसा। जो छोटे और मँझोले मालिक किसान हैं, वे चाहे पहाड़ी क्षेत्र के हों या मैदानी क्षेत्र के, पूँजी की मार एक हजार एक रास्तों से उन्हीं को मजबूर करती है कि वे जमीन बेचकर या तो मजदूर बन जायें या ढाबा-दुकान खोलने जैसा कोई छोटा-मोटा व्यवसाय कर लें। वे अपनी पिछड़ी चेतना के कारण लगातार घाटे का सौदा बनी खेती को बचाने की हरचन्द कोशिशें करते हैं, पर अन्ततोगत्वा विफल होते हैं और सर्वहारा-अर्द्धसर्वहारा की जमात में जा शामिल होते हैं। यह पूँजीवाद की अनिवार्य गति है और सच्चाई यह है कि मालिक होने के मोह से मुक्त होकर सर्वहारा की कतारों में शामिल होकर अपने अधिकार और मुक्ति की लड़ाई लड़ने में ही उनका एकमात्र भविष्य है। यह अध्यादेश न सिर्फ उनके मालिक बने रहने की हवाई उम्मीदों को थोड़ी और उम्र देने का प्रतिगामी काम करेगा, बल्कि खरीदारों की संख्या, यानी उनके बीच की प्रतिस्पर्धा कम होने के कारण अब उनके ज़मीनों की कीमत भी कुछ कम हो जायेगी।

सच्चाई यह है कि उत्तरांचल में पूँजीपतियों, व्यवसायियों और उच्च मध्यवर्गीय धनिकजनों का जो एक छोटा-सा तबका विकसित हुआ है, वह यही चाहता है कि पहाड़ों और तराई की जमीनें हथियाने में उसे दिल्ली-बम्बई-कलकत्ता के पूँजीपतियों एवं अन्य धनी तबकों से होड़ न करनी पड़े और सस्ती से सस्ती दरों पर गरीबों की जमीनें खरीदकर वे अपने फार्म-कालोनी आदि बना सकें। उत्तरांचल भू-अध्यादेश उनकी इसी आकांक्षा के अनुरूप है। यानी यह अध्यादेश पूँजीपतियों की आपसी प्रतिस्पर्धा में, एक हद तक स्थानीय पूँजीपतियों व अन्य मुनाफाखोर वर्गों के हितों की सुरक्षा का काम करता है। जहाँ तक आम जनता का प्रश्न है, उसे यह ठगने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं देता।

उत्तरांचल के मैदानी भूभाग में लाखों मेहनतकशों की आबादी गत बीस-पच्चीस वर्षों से किराये की कोठरियों-झोंपड़ियों में सपरिवार रह रही है। कानूनन वे उत्तरांचल के निवासी नहीं है जबकि कहीं और उनका कोई ठौर-ठिकाना भी नहीं है। यह आबादी अध्यादेश के मुताबिक "कृषक" भी नहीं कहला सकती। यदि ऐसा कोई मज़दूर जमीन का एक टुकड़ा खरीदकर झोपड़ी भी बनाना चाहे तो अब यह मुमकिन नहीं। यही बात आम मध्यवर्गीय नौकरीपेशा के साथ भी लागू होती है। तराई क्षेत्र की जो थारू, बुक्सा आदि जनजातियां हैं, कानूनी संरक्षण के तमाम दावों और दिखावों के बावजूद लाखों की यह आबादी अपने परम्परागत भू-स्वामित्व से पहले ही काफी हद तक, यूँ कहें कि लगभग पूरीतरह बेदखल हो चुकी है। उनकी ज्यादातर जमीनें तरह-तरह की तिकड़मों से या लाठी के जोर से फार्मरों ने हथिया ली है। उस आबादी की जीवन स्थितियों पर इस अध्यादेश से कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है।

यानी कुल मिलाकर, इस अध्यादेश का मूल उद्देश्य उत्तरांचल के छोटे और मँझोले मालिक किसानों के मालिक बने रहने के भ्रम को थोड़ा और बढ़ाकर सत्ताधारियों का उल्लू सीधा करना है और साथ ही, ऐसे हालात पैदा करना है कि वे अपनी जमीनें और अधिक सस्ती दरों पर बेचने के लिए विवश हो जायें। इसका दूसरा मुख्य उद्देश्य उत्तरांचल की आम मेहनतकश आबादी और देश के अन्य इलाकों से यहाँ आकर रोजी कमाने वाली आम मेहनतकश आबादी के बीच के अन्तरविरोधों को उभाड़ना है ताकि बुर्जुआ पार्टियाँ अपना उल्लू सीधा कर सकें तथा फार्मरों-पूँजीपतियों के खिलाफ आम मेहनतकशों की बढ़ती एकजुटता में फाँकें-दरारें पैदा की जा सकें। राज्य को ऐशगाह बनाने और जल-जंगल- जमीन के अंधाधुंध दोहन के लिए आतुर पूँजीपतियों के लिए अध्यादेश में तमाम छेद-सुराख छोड़ दिये गये हैं। जरूरत पड़ने पर फार्मरों-पूँजीपतियों को और छूटें दी जा सकें, इसके लिए कांग्रेसी सरकार ने एक और दांव खेलते हुए अध्यादेश में आवश्यक संशोधन के लिए राज्य योजना आयोग के उपाध्यक्ष विजय बहुगुणा के नेतृत्व में एक कमेटी भी गठित कर दी है। सपा-बसपा तराई के फार्मरों को खुश करने के लिए तथा बाहर से यहां आकर काम करने वाली मेहनतकश आबादी के वोट बैंक पर काबिज होने के लिए अध्यादेश के विरोध की राजनीति कर रही हैं। भाजपा और उक्रांद जैसे चुनावी दल "आवश्यक" संशोधनों की माँग करते हुए उत्तरांचल के स्थानीय पूँजीपतियों का विश्वासपात्र बनने के साथ ही पर्वतीय क्षेत्र की आम जनता के बीच अपना खोया हुआ चुनावी जनाधार फिर से पाने की कोशिशों में मशगूल हैं। वैसे भी, इनमें से किसी से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती वे आम मेहनतकश जनता के पक्ष में आवाज उठायें या उसके हित की दृष्टि से इस अध्यादेश की चीरफाड़ करें।

उत्तराखण्ड को अलग राज्य का दर्जा देने के आन्दोलन में इस पिछड़े क्षेत्र की आम जनता अपनी गरीबी और अपने क्षेत्र के तमाम संसाधनों की बाहर के पूँजीपतियों द्वारा लूट से क्षुब्ध होकर शामिल हुई थी। आम जनता की धारणा यह थी कि अलग राज्य बनने से उसकी जीवन स्थितियों में कुछ फर्क जरूर आयेगा। यह उम्मीद अब मिटने लगी है और इस स्थिति में इस अध्यादेश के रूप में एक और नया झुनझुना थम्हाने की कोशिश की गयी है। उत्तराखण्ड के पूँजीपति और अन्य मुनाफाखोर अलग राज्य के आन्दोलन में इसलिए शामिल थे कि वे इस क्षेत्र के मेहनतकशों की श्रमशक्ति और प्राकृतिक संसाधनों की लूट में, देश के अन्य इलाकों के लुटेरों के मुकाबले कुछ विशेष सुविधाएँ, यूँ कहें कि एक किस्म का आरक्षण चाहते थे। यह अध्यादेश राज्य के पूँजीपतियों-भूस्वामियों को एक हद तक यही "आरक्षण" देने की कोशिश करता है और इस बात का भी भरसक पूरा खयाल रखता है कि बाहर के पूँजीपतियों के हितों को नुकसान न पहुँचे। जो भी बोझ बढ़े, वह जनता पर पड़े - इस बात का पूरा खयाल रखा गया है और यदि कोई कोर-कसर रह गयी है तो उसे आने वाले दिनों में "आवश्यक संशोधनों" द्वारा दूर कर दिया जायेगा।

●

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वानी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंग: कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ।
सम्पादकः **डा. दूधनाथ, मुकुल** ● सम्पादकीय पताः **69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006** ● सम्पादकीय उपकार्यालयः जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ